अमीलो गाँव में किसान गोष्ठी सम्पन्न

आई०टी०सी० लिमिटेड आई०बी०डी० की तरफ से एक किसान गोष्ठी का आयोजन अमीलो गाँव में किया गया। जिसमें मुख्य अतिथि डा० परवेज विलियम्स (डाइरेक्टर मानव संसाधन विकास) एवं कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सुभांकर सिंह ने किया तथा कार्यक्रम का संचालन कृषि प्रसार अधिकारी आई०टी०सी० श्री वाचस्पति मिश्र ने किया। इस गोष्ठी में सैकड़ों किसान बन्धु उपस्थित रहे।

कार्यक्रम में प्रमुख रूप से श्री रमेश चन्द्र मिश्र, श्री संगम लाल द्विवेदी, रोहिणी प्रसाद द्विवेदी, मुकेश पाण्डेय, मनीष मिश्र, दीपक गोयंका, आलोक दुबे सहित अनेक लोग उपस्थित रहे।

एग्गीज़

शुद्ध, स्वच्छ,
रोगाणु रहित,
उच्च वैज्ञानिक विधि
द्वारा उपचारित

स्टैन्डर्ड दूध
टोन्ड दूध
डबल टोन्ड दूध
सुगन्धित दूध
टेबिल बटर
कुकिंग बटर
पनीर
दही
खोआ
देशी घी
विभिन्न प्रकार की आइसक्रीम

शादी एवं पार्टियों के शुभ अवसर पर सप्लाई की विशेष सुविधा उपलब्ध।

डेयरी अधीक्षक
स्टूडेन्ट्स ट्रेनिंग डेयरी
इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट - डीम्ड विश्वविद्यालय
इलाहाबाद - २११ ००७ (उ०प्र०) फोन - २६८४६०१

इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट - डीम्ड यूनिवर्सिटी

Allahabad Agricultural Institute - Deemed University

(A Christian University Of Rural Life)

Allahabad - 211 007 U.P. India

प्रोफेसर राजेन्द्र बी. लाल, कुलपति

Prof. Rajendra B. Lal, Vice-Chancellor
Ph.D.Soil Science (Kansas State University, U.S.A.)
Ph.D.Ag. Botany (Kanpur)
PDF Envion. Chem (K.S.U., USA)
FISAC, Gamma Sigma Delta Scholar.

Office : 0532-2684284
Res. : 0532-2684587
Fax : 0532-2684593
E-Mail : aadu@vsnl.com
Telegram : AGRINST

माननीय कुलपति का संदेश

भारत एक कृषि प्रधान देश है। जहां की प्रमुख अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। जिसमें धान की फसल मुख्य है। कृषि प्रधान देश होने के बावजूद भारतीय किसानों की दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है। एक ऐसे देश में जहां करीब 60 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर हो वहां यदि किसान खेती को घाटे का सौदा मानने लगे तो यह गम्भीर चिन्ता का विषय बनना चाहिये। आज जरूरत है कृषि के क्षेत्र में जागरण की, कार्यक्षमता में वृद्धि की, कृषि में प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ाने की, नई कृषि तकनीकी को खेती में उतारने की तथा कृषि दर को बढ़ाने की।

खेती केवल गरीब किसानों के या प्रकृति के भरोसे नहीं प्रगति कर सकती। इसके लिये सरकार द्वारा भी कृषि के क्षेत्र में निर्णायक पहल करने की जरूरत है। कृषि सुधारो को लागू करने तथा कृषि में सरकारी निवेश को और बढ़ाने की आवश्यकता है।

भारतीय कृषि आज अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है। जिसमें से कुछ हमें विरासत में मिली है जबकि अधिकतर समस्याओं का सम्बन्ध देश की बढ़ती हुई जनसंख्या है। मानव की लालची प्रकृति और पिछले वर्षो में हुये कृषि और औद्योगिक विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अन्धाधुन्ध शोषण है। इन समस्याओं के समाधान के लिये सरकारी नीति में बदलाव के साथ एक जन जागरूकता की आवश्यकता है। अतः यह जरूरी हो जाता है कि कृषि से जुड़े व्यक्तियों को कृषि सम्बंधी समस्याओं और उनके समाधान की जानकारी दी जाये।

भूमि का निम्नीकरण वर्तमान कृषि की एक प्रमुख समस्या है। विश्व की लगभग एक चौथाई जमीन अनुपजाऊ बन चुकी है। इसी कारणवश विश्व की एक बड़ी जनसंख्या इससे प्रभावित हो रही है। भूमि के बंजर होने से उत्पादन पर भी चोट पहुंचती है। बंजर भूमियों में जट्रोफा के पौधे का रोपण बड़ी आसानी से किया जा सकता है क्योंकि इसको किसी भी तरह का सुरक्षा तथा अन्य रखरखाव की आवश्यकता नहीं होती है। इसके साथ-साथ यह प्रकृति की विभिन्न परिस्थितियों को भी सहन करने की क्षमता रखता है। इसके वृक्षारोपण के प्रभाव से पर्यावरण संतुलन को बढ़ावा मिलेगा और भूमियों के क्षरण जैसी समस्याओं का समाधान भी सम्भव है।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित ।

(प्रो० (डॉ०) राजेन्द्र बी० लाल)
कुलपति
इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट - डीम्ड विश्वविद्यालय
(कृषक मित्र)

जट्रोफा (बायोडीजल) की
वैज्ञानिक खेती

डा० रामचन्द्र
प्रोजेक्ट एसोसिएट
कालेज आफ फारेस्ट्री
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० बी० मेहरा
सहायक प्राध्यापक
कालेज आफ फारेस्ट्री
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

प्रो०(डा०)एस०बी०लाल
डीन कालेज आफ फारेस्ट्री
ए०ए०आई०-डी०यू०,
इलाहाबाद

जट्रोफा यूफोर्विएसी कुल का पौधा है, जिसका वानस्पतिक नाम जट्रोफा करकस है। इसे रतनजोत, चन्द्रजोत तथा जंगली अरण्ड आदि नामों से जाना जाता है। इसके दूध (लैटेक्स) का उपयोग विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों में किया जाता है। इसके बीज से प्राप्त तेल को बायो-डीजल के रूप में उपयोग करने की आश्र्यजनक योजना है, जिसे डीजल की जगह उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग ईंधन, मोमबत्ती, साबुन, वार्निस, तथा बायो-उर्वरक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह विभिन्न प्रकार की जलवायु सहन करने वाला अद्भुत पौधा है जिसे कंकरीली, पथरीली, ऊसर, तथा ऊँची-नीची सभी प्रकार की भूमियों में सुगमतापूर्वक लगाया जा सकता है। भारत में यह समस्त मैदानी भागों से लेकर समुद्र तल की ऊँचाई से १५०० मीटर तक समस्त पहाड़ी स्थानों पर आसानी से उगाया जा सकता है। समान्य रूप से समशीतोष्ण जलवायु से लेकर उष्ण जलवायु तक उगाया जा सकता है। यह बहुत कम पानी चाहने वाला पौधा है। इसमें सूखा सहन करने का अद्भुत गुण पाया जाता हैं इसी लिए यह शुष्क जलवायु में आसानी से उगाया जाता है।

प्रजातियाँ :- सम्पूर्ण विश्व में जट्रोफा की लगभग ४७० प्रजातियाँ पाई जाती है। इनमें से केवल १४ प्रजातियाँ भारत में पाई जाती है, जिसमें अभी तक केवल नौ प्रजातियों का उल्लेख किया गया है। इन सभी में जट्रोफा कर्कस सुगमता से पाया जाता है। हमारे देश में पायी जाने वाली कुल नौ प्रमुख प्रजातियाँ इस प्रकार है:-

जट्रोफा कर्कस
जट्रोफा ग्लेन्डुलीफेरा
जट्रोफा विलोसा
जट्रोफा हेस्टेटा
जट्रोफा मल्टीफिडा
जट्रोफा पोडेरिका
जट्रोफा विलेसा
जट्रोफा नाना

वानस्पतिक विवरण :- यह एक झाड़ीनुमा बहुवर्षीय वृक्ष है जो सदाहरति छोटे से लेकर बड़े आकार के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। तना चिकना, मुलायम तथा काष्ठीय होता हैं इसमें कई शाखाएं निकली होती हैं। परन्तु तनों पर ऑखें तथा इन्टरनोड पाये जाते हैं। इसकी उँचाई सामान्यतः एक से डेढ़ मीटर तक होती है। तने या पत्तियों को तोड़ने पर सफेद रंग का दूध निकलता है। पत्तियाँ चिकनी हल्के हरे रंग तथ तीन से पॉच भागों में विभाजित होती है। पत्तियाँ एकान्तर विन्यास में लगी होती हैं। पुष्प सितम्बर से नवम्बर माह तक सफेद रंग तथा फल शाखाओं के अग्रस्त सिरे पर निकलते है। पुष्प विन्यास साइयेथिम क्रम में लगे होते है। फल कैप्सूल की तरह मोटा तथा २.५ -४.०० सेमी० व्यास के गुच्छे में लगे होते हैं। फल प्रारम्भिक अवस्था में हरे रंग का होता है। पकने पर हरे-पीले रंग तथा सूख जाने पर काले रंग का हो जाता हैं यदि तापक्रम अनुकूल तथा मृदा में नमी पर्याप्त मात्रा में बनी रहती है तो वर्ष में दो बार फूल-फल आते हैं प्रत्येक फल में तीन बीज होते हैं। बीज काले रंग का होता है।

उपयोग:- विगत वर्षो में जट्रोफा ईधन (बायोडीजल) का प्रमुख श्रोत बनकर उभरा है। इसका उपयोग पालिश, पेन्ट, साबुन, मोमबत्ती, रेजिन तथा अन्य

औद्योगिक इकाईयों में उपयोग किया जा रहा है। इसके तेल में निम्न लिखित अवयव पाये जाते है-

वसा	:	३८.२%
प्रोटीन	:	१ ८.२%
फाइबर	:	१५.५%
आर्द्रता	:	६.६२%
एश राख	:	५.०%
तेल	:	३३-४०%

औषधि गुण :- जट्रोफा में एक ऐसा तत्व पाया जाता है जिसे जेट्रीफीन कहा जाता है। जिसमें कैंसर प्रतिरोधी क्षमता होती है। अतः इसका उपयोग कैंसर सम्बन्धी औषधियों में किया जाता है। इसका तेल दस्तावर होता है। इसके तेल का उपयोग त्वचीय रोगों जैसे दाद, खाज, खुजली, गठिया, लकवा आदि में भी किया जाता हैं इसके दूध में असाध्य जख्म भरने का गुण विद्यमान है तथा सर्प दंश दूर होता है। इसे दन्त रोगों में तथा मसूड़ों पर लगाने से मसूड़ों की सूजन दूर होती है। जावा में इसके रस का उपयोग गठिया तथा पेट सम्बंधी रोगों में किया जाता है। इसकी पत्ती के रस का उपयोग बवासीर के उपचार में लाभदायी होता है। इसका उपयोग एण्टी वायरल एण्टी ट्यूमरल, अल्सर, डायरिया, पेट दर्द, सिर बाल वृद्धि तथा काला डाई आदि में रूप में प्रयोग किया जाता है।

सारणी :- १

जट्रोफा के विभिन्न भागों का चिकित्सीय उपयोग

क्रम संख्या	**पौधा उपयोगी भाग**	**रोग**	**रिफरेन्स (सन्दर्भ)**
१.	बीज	गठिया , पीलिया तथा जोड़ों का दर्द	सौरवेन आदि १९९३
२	नयी कोपले/तना	दन्त रोग, दॉव का हिलना, पाइरिया, मसूड़ों में सूजन, दॉत की बदबू इत्यादि	गिरच आदि, १९९५
३	पौधों के तथा पत्ती का अर्क	बवासीर, रक्त विकार तथा कब्ज	आई० सी० एफ० आर० ई०, १९९५
४	दूध (जैट्रोफीन)	कैंसर प्रतिरोधी	आई० सी० एफ० आर० ई०, १९९५
५	टहनी का रस	घाव, अल्सर	आई० सी० एफ० आर० ई०, १९९५
६	पौधों का रस	चर्म रोग	मैरोक्वीन आदि, १९९७
७	टहनियों का अर्क	ट्यूमर, एच०आई०वी०	मसूस आदि, १९९९
८	पौधों का रस	एलर्जी, जलने-कटने, कुष्ठ, ल्यूकोडर्मा, चेचक, इत्यादि	दिलारा एवं जाया

नोटः- जट्रोफा का औषधीय उपयोग चिकित्सक की परामर्श पर करें अन्यथा हानि हो सकती है।

भूमि सुधार :- बंजर भूमियों में जट्रोफा के पौधे का रोपण बड़ी आसनी से किया जा सकता है क्योंकि इसको किसी भी तरह का सुरक्षा तथा अन्य रख-रखाव की आवश्यकता नही होती है। इसके साथ-साथ यह प्रकृति की विभिन्न परिस्थितियों को भी सहन करने की क्षमत रखता हैं। इसके विभिन्न भागों में पोषक तत्वों की मात्रा होती है जो बंजर भूमि में मिलकर भूमि की संरचना को सुधारता है। इस प्रकार बंजर भूमि का सुधार सम्भव हो सकता है।

कृषि वानिकी :- इस पौधे को फसलों के साथ कृषि वानिकी प्रारूप में लगा कर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। जट्रोफा के साथ लता वाली फसलो जैसे करैला, कलिहारी, गिलोय, कौंच आदि लगाने पर फसलों की उत्पादकता भी बढ़ाई जा सकती है। इस पौधे के साथ-साथ दलहनी फसलों की प्राथमिकता देना अति उपयोगी सिद्ध हुआ है।

बाड़ हेतु :- जट्रोफा बढ़ने वाला तथा झाड़ीदार होता है, जिसे बहुधा खेत के चारो ओर बाड़ के रूप में लगाया जाता है। इसे पास-पास लगाने से यह एक बाड़ का काम करता है। इसको पास पास लगाने से फसल सुरक्षा तथा तेज हवाओं से भी फसल की सुरक्षा होती हैं।

जैविक खाद :- बीजों का तेल निकालने के बाद बची हुयी खली को जैविक खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। समस्त बीजो की खली के बराबर पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसका एक तुलनात्मक विश्लेषण निम्न सारणी में दिया गया है।

सारणी : २

जट्रोफा की खली में पाये जाने वाले पोषक तत्वों का विभिन्न जैविक खादों से तुलनात्मक विवरण

क्रम सं०	खाद	नाइट्रोजन प्रतिशत	फास्फोरस प्रतिशत	पोटैशियम प्रतिशत
१	जट्रोफा कर्कस की खली	५	२.१	१.७०
२	नीम की खली	५.००	१.००	१.००
३	करंज की खली	४.०१	०.९९	१.००
४	गाय का गोबर	०.९८	०.६८	१.६५
५	मुर्गी के बीट से प्राप्त खाद	३.०५	६.३	२.७
६	बत्तख के बीट से प्राप्त खाद	०.९०	०.१९	०.६७
७	शहरी मलवाहित खाद	१.३०	०.२४	०.६६
८	भूसे की खाद	२.४०	२.१	१.००
९	जलकुम्भी की खाद	१.५०	०.५०	०.४७

बायोडीजल :- इसके बीजों से निकलने वाले तेल को बायोडीजल के नाम से जाना जाता है, क्योंकि इसमें सल्फर की मात्रा अल्पतम होती है इसी कारण इसका उपयोग किसी भी डीजल इंजन में डालकर बिना किसी परिवर्तन के प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके डीजल के ज्वलन से उत्सर्जित गैसों में ग्रीन हाउस गैसों तथा कार्बन मोनाआक्साइड के परिणाम में उल्लेखनीय कमी देखी गयी है। जबकि खनिज डीजल से इन गैसों के कारण पृथ्वी के गर्म होने की समस्या निरंतर बढ़ रही है। इसके वृक्षारोपण से जहाँ एक तरफ बायोडीजल के रूप में इस्तेमाल करने से पर्यावरण संतुलन को बढ़ावा मिलेगा वहीं दूसरी ओर भूमियों के क्षरण जैसी समस्याओं का समाधान संम्भव है।

धान बाली निकलने के बाद

फसल सुरक्षा तथा कटाई/मड़ाई सम्बंधी

डा० पी० विलियम्स
निदेशक
प्रशासन एवं मानव संसाधन विकास
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

बसन्त दीक्षित
कृषि प्रसार विशेषज्ञ
आई०टी०सी० लखनऊ
उत्तर प्रदेश

वाचस्पति मिश्र
कृषि प्रसार अधिकारी
आई०टी०सी०
इलाहाबाद

फसल सुरक्षा :- भारत एक कृषि प्रधान देश है। जहां की प्रमुख अर्थव्यवस्था कृषि है। जिसमें धान की फसल मुख्य है। इस फसल को रोग तथा कीट हानि पहुंचाते हैं। जिससे काफी फसल का नुकसान हो जाता है। धान में बाली निकलने के बाद जो रोग तथा कीट हानि पहुंचा सकते हैं उनके नियंत्रण सम्बंधी जानकारी निम्न प्रकार है-

रोग :- झोंखा रोग, शीत झुलसा, भूरा धब्बा, तना गलन तथा मिथिया खंडुआ रोग की समस्या हो सकती है। यदि ५ प्रतिशत पत्तियों या १-२ प्रतिशत बालियों पर झोंखा रोग दिखे या ५ प्रतिशत से अधिक पत्तियों/कलों पर शीत झुलसा या भूरा धब्बा या तना गलन दिखे तो नियंत्रण के लिए कार्बेनडायजिन ५० डब्ल्यू पी @ एक किलोग्राम प्रति हेक्टेयर या टिल्ट २५ ई सी @ ५०० मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर का पानी के घोल का छिड़काव करें। झोंखा रोग के लिए हिनोसन @ ५०० मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव विशेष लाभदायक है।

मिथिया खंडुआ ग्रस्त क्षेत्रों में कापर ऑक्सीक्लोराइड ५० डब्ल्यू पी @ १.५ किलोग्राम प्रति हेक्टेयर का छिड़काव गबा अवस्था से हर १० दिन बाद करें।

कीट :- फूंदके / टिड्डे (५-१० प्रति हिल), पत्ती लपेट कीट (१-२ प्रति हिल), बॉल काटने वाला कीट अर्थात सैनिक कीट (१-२ प्रति हिल) या गन्दी बग कीट (२-३ प्रति मीटर स्क्वायर दिखने पर किसी भी एक निम्न कीट नाशक का छिड़काव / भुरकाव करें।)

क्लोरपायरीफॉस २० ई सी @ १ लीटर प्रति हेक्टेयर पानी के घोल का छिड़काव करें।

मोनोक्रोटोफॉस ३५ ई सी @ १ लीटर प्रति हेक्टेयर पानी के घोल का छिड़काव करें।

इंडोसल्फॉन ३५ ई सी @ १.२५ लीटर प्रति हेक्टेयर पानी के घोल का छिड़काव करें।

क्वीनॉलफॉस २५ ई सी @ १.२५ लीटर प्रति हेक्टेयर पानी के घोल का छिड़काव करें।

मेथायल पैराथियान २ प्रतिशत धूल @ २५-३० किलो प्रति हेक्टेयर का भुरकाव करें।

मेलाथियान ५ प्रतिशत धूल @ २५-३० किलो प्रति हेक्टेयर का भुरकाव करें।

फेनथियोनेट २ प्रतिशत धूल @ २५-३० किलो प्रति हेक्टेयर का भुरकाव करें।

फेनविलरेट ०.४ प्रतिशत धूल @ २५-३० किलो प्रति हेक्टेयर का भुरकाव करें।

- भूरा फुदका प्रकोप होने पर कॉनफीडोर .. १२५ मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर के पानी के घोल का छिड़काव विशेष रूप से अनुमोदित है।
- छिड़काव के लिए पानी की मात्रा प्रयोग किये जाने वाले यन्त्र पर निर्भर है तथा ५०० से १००० लिटर प्रति हेक्टेयर हो सकती है पर ध्यान रखें कि रसायन की मात्रा उक्त अनुमोदन अनुसार ही होनी चाहिए।
- छिड़काव/भुरकाव देर शाम करना अनुमोदित है।
- यदि रोग/कीटों का प्रकोप ब्रेकेट में दी गयी स्तर से कम हो तो छिड़काव/भुरकाव की आवश्यकता नही होती।

शेष पृष्ठ सं० --१६ पर

नये बागों में अन्तः फसल प्रबन्धक
अतिरिक्त आय का स्रोत

डा० वी०एम० प्रसाद
सह-प्राध्यापक
उद्यान विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० श्रीमती स्वाती बार्चे
सहायक प्राध्यापक
उद्यान विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

फल पौषक दृष्टि से ही नहीं वरन् स्वास्थ्य की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होते हैं। फलों से पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, साथ ही साथ खनिज तत्व जैसे - कैल्शियम, आयरन और एंटीआक्सीटेट तत्व प्राप्त होते हैं।

फल - पौधों की जीवन अवधि काफी लम्बी होती है। एक बार लगाने के बाद ये ३०-३५ साल तक यहां तक की कभी-कभी ५० साल तक भी फल देने की क्षमता रखते हैं। जैसे- आम, अमरूद, बेर आदि इन फल पौधों की जीवन अवधि मुख्य रूप से दो भागों में बांटी जा सकती है। प्रथम - लगाने से लेकर वनस्पतिक बढ़वार तक तथा दूसरी - उत्पादन अवधि फल पौधों को उत्पादन अवधि में पहुंचने के लिये कम से कम ५ वर्ष का समय लगता है। किसान भाईयों को ५ वर्ष तक ना तो अपने उद्यान से ना तो कोई फल मिलेगा और ना ही कोई मुनाफा होगा। परन्तु अंतरासस्यन एक ऐसी विद्या है जिससे किसान ना केवल अपनी भूमि की रक्षा कर सकता है बल्कि अतिरिक्त मुनाफा भी प्राप्त कर सकता है। जब तक पौधे फलत् अवस्था में ना पहुंचे तब तक किसान को अंतरासस्यन करने की सिफारिश की जाती है। अंतरासस्यन के लिए उन फसलों का चुनाव करना चाहिए जो बहुत अधिक पोषक तत्वों को ग्रहण नहीं करती है।

- बहुत अधिक गहरी जड़ें न हों।
- अंतरासस्यन हेतु दलहनी फसलों का चुनाव एक सीमा तक लाभदायक है। लेकिन अमरूद के बागों में इसे न लगावें।

चूंकि दलहनी फसलों में सूखे रोग की समस्या बहुत अधिक होती है और इसकी फफूंद मिट्टी जनित है जो आगे चलकर अमरूद के पेड़ों को सुखाना आरंभ कर देगी। दलहन के स्थान पर किसान भाइयों को थालों में हल्दी, लहसुन यहां तक कि गेंदे को भी लगा देना चाहिए। जिससे उकठा रोग से बचाव के साथ-साथ इन फसलों को बाजार में बेचकर अतिरिक्त आमदनी भी प्राप्त कर सकते हैं। रबी की अपेक्षा जायद तथा खरीफ में बोई जाने वाली सब्जियों से अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है। किसान भाइयों को चाहिए कि नये लगाये गये बागों में कम अवधि में जल्दी पककर तैयार होने वाली सब्जियां लगानी चाहिए। जैसे- आम के बाग के थालों में खरीफ ऋतु में कद्दू तथा टिण्डा, करेला आदि लगाये जा सकते हैं।

रबी में - मेथी, मूली, पालक, शलजम, मटर आदि की बुआई की जा सकती है।

जायद में - तरबूज, सीताफल, ककड़ी, तौरई आदि की बुआई की जा सकती है।

इलाहाबाद और आसपास के जिलों में सबसे बड़ी समस्या मिट्टी की उसरता है। इन उसर भूमि में बाग लगाने की सावधानी के साथ-साथ इस बात का विशेष ध्यान रखें कि बाग में खाली जगह न छोड़ी जायें। फलतः आने तक पालक, बैंगन, लौकी (गड्ढों में) करेला, भिंडी सब्जियों में, फूलों में- गेंदा, औषधीय पौधों में लेमन घास व विटेवर को अंतरासस्यन के रूप में लगाया जा सकता है। जहां इन्हें बेचकर अतिरिक्त आमदनी मिलेगी वहीं ये भूमि को उसर होने से भी बचाऐंगी और उसका

शेष पृष्ठ सं० --२० पर

पर्यावरण दूषित क्यों?

डा० रजिया परवेज
सहप्राध्यापक
परिवार संसाधन प्रबन्ध विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

वातावरण दूषित होने का तात्पर्य है घर के आसपास फैली गन्दगी से है जो कि घर के अन्दर और बाहर के वातावरण को दूषित करती है। वातावरण को दूषित करने के अनेक कारण हो सकते हैं। जिस पर हम कभी भी ध्यान नहीं देते। यदि इन पर थोड़ा भी ध्यान दिया जाये तो वातावरण दूषित होने से बचाया जा सकता है।

वाह्य प्रदूषण :- हर एक प्रकार का प्रदूषण मनुष्य अपनी क्रियाओं द्वारा ही पैदा करता है और प्रदूषण के द्वारा उत्पन्न कठिनाइयों का बहुत ही घातक परिणाम होता है।

यातायात जिसमें गैसोलीन का उपयोग होता है वे वातावरण को अपने द्वारा निकाली हुई नाइट्रोजन, कार्बन व अन्य विषैली गैसों से प्रदूषित करते हैं। कोयला या डीजल जलाये जाने पर सल्फर डाई आक्साइड पैदा होता है जो कि विषैली गैस होती है। ये अदृश्य पदार्थ धूल एवं धुएं में अधिक फैले रहते हैं जो कि हवा चलने पर दूर - दूर तक चले जाते हैं। वायु में फैले विषाणु अनेक प्रकार के रोगों को फैलाने में सहायक होते हैं। जब बीमारी से पीड़ित लोग खांसते हैं, छींकते हैं या बात करते हैं तो यह अन्य लोगों के पास हवा के द्वारा पहुंच जाते हैं।

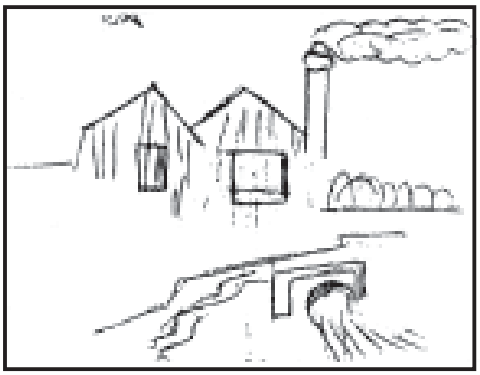

यदि वायरस या फंगस के जीवाणु काफी दूर तक वायु में पहुंच गये हैं तो यह खसरा, चेचक, पोलियो जैसी बीमारी को बढ़ावा देते हैं। ये बीमारी गन्दी जगहों में अधिक होती है।

आन्तरिक प्रदूषण :- घर का वातावरण दूषित होने के भी अनेक कारण हैं। जैसे घर में नित्य सफाई न करना जानवरों के स्थान का गन्दा होना, खाने-पीने की स्वच्छता का ध्यान न देना इत्यादि है ऐसी स्थिति में घर के चारों ओर मक्खियां भिनभिनाती ही मिलती हैं।

यदि हमने घर के आस-पास की सफाई का ध्यान नहीं दिया तो घरों के आसपास कूड़े करकट का ढेर है तथा गन्दा पानी ठहरा हुआ है जहां रोग के कीटाणु पनप रहे हों तब हमारी अपनी घर की सफाई का कोई फायदा नहीं है। क्योंकि हमारे घर की आसपास की गन्दगी से वायु दूषित हो जाती है। हम उसका सेवन करते हैं दूषित वातावरण में रहकर हम रोग से कभी छुटकारा नहीं पा सकते हैं।

शहरों में नगर महापालिका की गाड़ियां, घरों का इकट्ठा हुआ कूड़ा करकट उठाकर ले जाती हैं गन्दे पानी के निकास के लिए अक्सर बन्द नालियां होती हैं। परन्तु गांव में यह सुविधा उपलब्ध नहीं होती है। गांव में अक्सर लोग प्रवेश द्वार पर ही कूड़ा फेंकते हैं। जब भी कोई गांव में आता है तो कूड़े से ही उसका स्वागत होता है। आगे चलकर गलियों में गन्दा पानी सड़ता हुआ मिलेगा। अब आप ही सोचें कि केवल घर को ही साफ रखने का क्या फायदा रह जाता है।

वातावरण की सफाई अच्छे स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है। ये दो प्रकार से की जा सकती है। अपने द्वारा अथवा दूसरों के द्वारा। अपने द्वारा की गई सफाई से खुद को लाभ होता है।

वैज्ञानिकों ने आजकल इस समस्या का उपाय ढूंढ़ निकाला है। गांवों में लोगों को चाहिए कि वह भी उन उपयोग को प्रयोग में लाएं।

दूध एवं दुग्ध पदार्थों पर विभिन्न धातुओं का प्रभाव

डा० जार्ज प्रिंस
सहायक प्रवक्ता
खाद्य एवं डेयरी संकाय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० रमेश चन्द्रा
डीन, सह-प्रवक्ता
खाद्य एवं डेयरी संकाय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

अभि० संदीप प्रसाद
सहायक प्रवक्ता
खाद्य एवं डेयरी संकाय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

इसमें संदेह नही कि दुग्ध का व्यवसाय सफल होना बहुत कुछ उसमें प्रयोग हाने वाले बर्तनो एवं यन्त्रो पर निर्भर करता है किसी भी डेयरी फार्म पर अथवा दुग्ध संघ में प्रयोग होने वाले बर्तन तथा यन्त्र अधिकतर धातु एवं इसके मिश्रण के होते हैं। बहुत से धातु के बने बर्तन दूध एवं दुग्ध पदार्थो के सम्पर्क में आकर उसमें या तो धुल जाते है अथवा दूध के अवयवों के साथ मिलकर कुछ लवण बनाते है जिसके कारण दुग्ध अथवा पदार्थो में धातु का सुवास उत्पन्न हो जाता है। डेयरी सज्जा में प्रयोग होने वाली मुख्य धातुऐं लोहा, तांबा, टिन, एल्यूमिनियम, निकिल तथा जस्ता इत्यादि हैं।

१. लोहा :- यह सख्त एवं अधिक स्थाई होता है यह दूध में घुलनशील होता है और शीघ्र ही इसमें जंग लगना आरम्भ हो जाता है एवं दूध में इस धातु का सुवास भी आ जाता है। इस धातु पर धावन विलियन क्लोरीन यौगिक तथा ब्राइन का भी प्रभाव पड़ता है। लोहे पर कलई की कोटिंग करके इसका अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

२.तांबा :- यह बहुत नर्म एवं उष्मा संवाहक होता है। यह दूध में अधिक घुलनशील होता है और इसलिये जब यह दूध अथवा दुग्ध पदार्थो के सम्पर्क में आता है। तो इन पदार्थो में इस धातु का सुवास पैदा हो जाता है। इस धातु का प्रभाव दूध की वसा पर अधिक पड़ता है। यदि तांबे के बर्तन में मक्खन को भरकर रख दिया जाये तो यह मक्खन शीघ्र ही खराब हो जायेगा इसलिये तॉबे पर गहरी कलई करके ही डेयरी के प्रयोग में लाना चाहिए।

३. टिन :- यह धातु नर्म तथा कीमती होती है अम्ल, क्षार तथा दूध में घुलनशील होती है। इस घुलनशीलता के कारण दूध में विषैले लवण बन जाते है दूध का सुवास एवं स्वाद ही बदल जाते है। यह धातु क्षारीय विलियन में घुलनशील होती है।

४. एल्यूमीनियम :- डेयरी व्यवसाय में अधिक प्रयोग होने वाली यह हल्की कीमती जंग के लिये अधिक प्रतिरोधी तथा दूध एवं पदार्थो में अघुलनशील धातु है। यदि यह दूध में घुल जाये तो हानिकारक नहीं होती है। यह अच्छी उष्मा संवाहक होती है। नर्म होने के कारण यदि इस धातु के बर्तनों को जोर से रगड़ा जाये तो बर्तनों में गडढ़े पड़े जाते हैं जो जीवाणु संक्रमण का कारण बन जाते हैं। इस धातु पर पारे का शीघ्र प्रभाव पड़ता है। इसलिए टूटे थर्मामीटर एवं लैक्टोमीटर को इस धातु में नहीं रखना चाहिये। इस धातु पर क्षार विलियन का बुरा प्रभाव पड़ता है। इसलिये इसके बर्तनो को धोने के समय इन विलियन में थोड़ी मात्रा सोडियम सिलिकेट की मिला लेनी चाहिये।

५. निकिल :- यही सख्त परन्तु दूध में कुछ घुलनशील होती है। ऐसा अनुमान है कि इसके घुलने से कुछ विषैले लवण बन जाते है जो हानिकारक होते हैं। निकिल स्वयं अकेले प्रयोग न होकर अन्य धातुओं के साथ मिलाकर उत्तम प्रकार के बर्तन बनाती है। जैसे अविकारी इस्पात इत्यादि। पनीर बनाने के लिए पनीर वैट कभी भी निकिल की नही बनी होनी चाहिये क्योकि पनीर में अधिक अम्लता की मात्रा होने के कारण यह निकिल को शीघ्र खराब कर देती है।

६. जस्ता :- यह धातु नर्म तथा कीमती होती है। अम्ल, क्षार तथा दूध में घुलनशील होती है। इस घुलनशीलता के कारण दूध में विषैले लवण बन जाते

शेष पृष्ठ सं० --२२ पर

फसलों में फास्फोरस विलेयक जीवाणु खाद अपनायें

डा० तखत सिंह राजपुरोहित
३४, इमरतिया बेरा
पावटा सी रोड,
जोधपुर (राजस्थान) ३४२००१

जीवाणु खाद किसे कहते हैं?

जीवाणु से यहां तात्पर्य उन सूक्ष्म जीवों से है जो हवा में उपलब्ध नाइट्रोजन को अपने में संचय कर अथवा मृदा में जमा पैतृक फास्फोरस को घुलनशील बनाकर खेत में उगाई जा रही फसल के लिए उपलब्ध कराते हैं। प्रयोगशाला में इन शाकाणुओं को अनुकूल भोज्य पदार्थ के साथ पैकेट में बन्द कर उपयोग हेतु उपलब्ध कराया जाता है। इन्हें जीवाणु या शाकाणु खाद कहते हैं।

फास्फोरस विलेयक जीवाणु खाद (पी०एस०बी०) क्या है?

पौधों की उचित वृद्धि हेतु नत्रजन के साथ फास्फोरस उर्वरक भी महत्वपूर्ण है। इसकी आपूर्ति पौधों को सुपरफास्फेट या डी०ए०पी० उर्वरक के माध्यम से पौधों को कराई जाती है। जितनी भी मात्रा में भूमि में फास्फोरस उपलब्ध कराया जाता है उसका २०-२५ प्रतिशत ही घुलनशील अवस्था में पौधों को उपलब्ध हो पाता है। शेष ७५-८० प्रतिशत भाग भूमि में अघुलनशील अवस्था में फास्फोरस योगिकों के रूप में स्थिर हो जाता है- जिसे पौधे ग्रहण नहीं कर पाते हैं, फलस्वरूप उत्पादन कम होता है। फास्फोरस विलेयक जीवाणु मृदा में मौजूद खनिज फास्फोरस तथा मृदा प्रक्रिया द्वारा जमा हो गए फास्फोरस को घुलनशील बनाते हैं। ताकि खेत में उगाई जाने वाली फसल इस फास्फोरस का उपयोग कर सके। इस जीवाणु खाद को फास्फोरस विलेयक जीवाणु खाद या पी०एस०बी० कहते हैं।

फास्फोरस विलेयक जीवाणु खाद किन फसलों में उपयोग करनी चाहिये?

फास्फोरस विलेयक जीवाणु खाद सभी प्रकार के अनाज, दलहन, तिलहन, चारा, सब्जियां, नकदी तथा अन्य फसलों में उपयोगी है।

किसान भाइयों को पी०एस०बी० से क्या लाभ हैं?

विभिन्न अनुसंधानों से किए गए अनुसंधानों से पता चला है कि पी०एस०बी० के उपयोग से पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। इसके उपयोग से ३०-३५ किलोग्राम प्रति हेक्टेयर फॉस्फेट उर्वरकों की बचत होती है।

पी०एस०बी० जीवाणु खाद पौधों को फॉस्फेट कैसे उपलब्ध कराती है?

अघुलित फॉस्फोरस को उपलब्ध कराने के लिए बेसिलस या स्युडोमोनास जैसे जीवाणु ऑर्गेनिक अम्ल का स्राव करते हैं जिससे अद्रवित फास्फोरस को द्रवित कर देते हैं। जिससे फॉस्फेट पौधों द्वारा ग्रहण कर ली जाती है।

पी०एस०बी० जीवाणु खाद क्यों?

पी०एस०बी० जीवाणु खाद प्रदूषण मुक्त है। प्रकृति में होने वाली कार्बनिक क्रिया में सहायक होती है। इसके प्रयोग से भूमि की उर्वराशक्ति पर कोई प्रतिकूल असर नहीं है।

भूमि का उपजाऊपन बनाए रखती है। उपयोग में आसानी है तथा जीवाणु खाद सस्ती है। पी०एस०बी० जीवाणु खाद बनाने की प्रक्रिया न सिर्फ जल्दी होती है वरन् इसमें ऊर्जा की खपत औद्योगिक क्रिया के अनुपात में कम होती है। इसलिए किसान भाई पी०एस०बी० जीवाणु खाद अपनाकर अधिक फसलों की पैदावार ले सकते हैं।

कैंसर और आहार

श्रीमति वरजीनिया पौल
आहार विशेषज्ञ, एसो० प्राध्यापिका
खाद्य एवं पोषण विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

आधुनिक समय में कैंसर एक महामारी के रूप में विकासशील देशों में फैल रहा है। वर्ष २००४-२००५ में भारत में लगभग २१५,९९० महिलाएं स्तन कैंसर से पीड़ित थी। सर्वेक्षण रिर्पोट के अनुसार प्रत्येक हजार स्त्रियों में से दस स्तन कैंसर से मृत्यु की शिकार हो जाती है तथा भारत में २००४-२००५ में लगभग २८८,००० महिलाएं ३७५,००० पुरूष तथा ४०००,००० बच्चे भारत में विभिन्न प्रकार के कैंसर से पीड़ित थे।

खान पान व्यवस्था तथा रहन सहन के स्तर में हमारे यहां व्यापक बदलाव आया है। अत्यधिक मांस मछली व वसायुक्त भोजन रिफाइन्ड खाघ पदार्थो का सेवन, आहार में अनियमितता, यूरिया के अत्यधिक प्रयोग, पेस्टीसाइडस डिब्बाबंद तथा चायनीज फूड का बेहद चलन, वाइन, गुटखा, तम्बाकू मसाला का फैशन, स्मोक्ड फिश या मांस के सेवन, चर्बीयुक्त भोजन, डालडा और सैचुरेटेड वसा का सेवन, युवाओं में धूम्रपान का सेवन इत्यादि सभी कैंसर को विकसित करने वाले घटक है। इनके अलावा वायरस जैसे हेपीटाइटिस-बी, पैरासाइट, हारमोन्स परिवर्तन, भी कैंसर को बढ़ाने में सहायक है। कैंसर पहचान के संकेत-गले में लगातार दर्द व छाले रहना, मूत्राशय/मलाशय के नियमित क्रम में बदलाव, नाक से अक्सर खून आना, स्तन या शरीर में अन्दरूनी गांठ का अनुभव, अपचन रहना निगलने में दिक्कत, मस्से/तिल की संख्या व आकार में बदलाव, रक्त के साथ खांसी आना। उपरोक्त शिकायत होने पर इसे गंभीरता से ले तथा स्थानीय अस्पताल में तुरन्त परीक्षण करवाए।

कैंसर में भोजन का चुनाव :- अपने आहार को सन्तुलित बनाए। आहार में वसायुक्त भोजन, सूखे मेवों, अण्डे की जर्दी, लार्ड, डालडा, रथ, घी, लाल मांस आदि के प्रयोग से परहेज करें। कोलेस्टरोल युक्त भोजन कैंसर को और बढ़ाता है। आप सभी रेशेयुक्त भोज्य पदार्थ जैसे मोटे अनाज, चोकर युक्त अनाज, कच्ची सब्जियां, सलाद, ताजे फलों का नियमित उपयोग करें। जौ और उसके बने पदार्थ, साग, हरी सब्जियां और सब्जियों का सूप इत्यादि भी विटामिन और खनिज लवणों से युक्त होने के कारण शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते है। अंकुरित दाले जैसे मूंग, चना, सोंठ आदि भी अभूतपूर्व सेहतमंद है। पत्ता गोभी, भिंडी, फूल गोभी, लौकी, तुराई का उपयोग भी हर संभव करना चाहिए। प्याज व लहसुन कैंसर प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते है। सोयाबीन और उससे बने सभी पदार्थ में फाइटोस्टोस्टेरोल्स और सैपोनिन होते है जो कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि को रोकते है तथा रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाते हैं।

मन तो सब वस्तुओं से अधिक धोखा देने वाला होता है, उस में असाध्य रोग लगा है; उसका भेद कौन समझ सकता है? मैं यहोवा मन को खोजता और हृदय को जांचता हूं ताकि प्रत्येक जन को उसकी चाल चलन के अनुसार अर्थात् उसके कामों का फल दूं।।

यिर्मयाह १७ : ९-१०

दूध की गुणवत्ता की जांच कैसे करें?

डा० जे० डेविड
सहायक प्राध्यापक
डेरी प्रौद्योगिकी
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

भारत विश्व में दूध उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। दूध के कुल उत्पादन की ४६ प्रतिशत मात्रा का उपयोग पीने में किया जाता है। जबकि शेष मात्रा का उपयोग दूध की अन्य उत्पाद और मिठाइयां बनाने में किया जाता है।

दूध एक स्वास्थ्यवर्द्धक पेय है। सही पोषण के लिए इसका गुणवत्ता सही होनी चाहिए। दूध में अघुलनशील बाहरी पदार्थ (धूल, गोबर के कण, तिनका, भूसा आदि) नहीं होनी चाहिए। इसमें अधिक लैक्टिक अम्ल नहीं होना चाहिए और किसी तरह की बाहरी चीजों (मैदा, चीनी, खाने का सोडा) की मिलावट नहीं होनी चाहिए। यदि दूध में कोई बाहरी पदार्थ पाया जाता है तो संबंधित व्यक्ति को सजा दी जा सकती है।

दूध की गुणवत्ता के लिए प्रमुख जांच :-

(१) सी.ओ.बी. जांच :- यह जांच दूध में उपस्थित लैक्टिक अम्ल के संबंध में किया जाता है। इस परीक्षण में ५ मिली० दूध को परखनली में उबाला जाता है। यदि दूध फट जाता है तो दूध की गुणता अच्छी नहीं है। दूध तभी फटेगा जब उसमें लैक्टिक अम्ल की मात्रा ज्यादा होगी।

(२)दूध की अम्लता का परीक्षण :- लैक्टिक अम्ल की मात्रा दूध की गुणता को दर्शाती है। अच्छे दूध की अम्लता ०.१५ प्रतिशत होनी चाहिए। तभी वह उपयोग के योग्य है। उसमें किसी प्रकार का खट्टापन नहीं होना चाहिए। दूध की अम्लता अनुमापन विधि से ज्ञात की जाती है।

(३)एल्कोहल अवक्षेपण परीक्षण :- इस जांच से दूध में अधिक अम्लता, लवण संतुलन में गड़बड़ तथा बीमार पशु के दूध आदि का पता चल जाता है।

(४)तलछट परीक्षण :- इस परीक्षण के द्वारा दूध में अघुलनशील बाहरी पदार्थ (धूल, गोबर के कण, तिनका, भूसा आदि) की मात्रा ज्ञात की जाती है। जो दूध की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। १००० मिली० दूध को एक पिचकारी में लिया जाता है, जिसके मुंह पर एक फिल्टर पैड लगा रहता है। इस पैड में दूध को प्रवाहित किया जाता है। दूध में उपस्थित बाहरी पदार्थ इस पैड पर बना जाते हैं और दूध का निम्नानुसार वर्गीकरण कर लिया जाता है।

बाहरी पदार्थ (मिग्रा०)	दूध का वर्गीकरण
०.०	उत्कृष्ट
०.२	उत्तम
०.५	अच्छा
१.०	घटिया
२.०	बहुत घटिया

दूध में पाए जाने वाले प्रमुख मिलावट और उसका जांच :-

(१) पानी की मिलावट :- दूध में पानी की मिलावट बहुत ही आसान और प्रचलित विधि है। पानी मिलाने से दूध का आपेक्षिक घनत्व कम हो जाता है। शुद्ध दूध का आपेक्षिक तत्व लैक्टोमीटर से निकाला जाता है। दूध का आपेक्षिक घनत्व एवं वसा की प्रतिशत मात्रा, दोनों का कम होना पानी की मिलावट का सूचक है। दुग्ध वसा की मात्रा गरबर (Gerber) विधि से निकाला जाता है।

(२)मैदा आदि की मिलावट :- दूध को गाढ़ा करने के लिए दूधिये दूध में मैदा, अरारोट, आलू का पाउडर, आटा आदि मिला देते हैं। ग्राहक दूध के गाढ़ा होने से उसे उत्तम दूध समझते हैं, जबकि ऐसा नहीं देता है। इसके जांच इस प्रकार से किया जाता है। परखनली में ५ मिली० दूध लेकर उबालें।

शेष पृष्ठ सं० --२४ पर

भैंस पालन में ध्यान देने योग्य बातें

डा० रमेश पाण्डेय
ऐसोसिएट प्रोफेसर
पशु चिकित्सा एवं पशु पालन संकाय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

हमारे देश का आधा से अधिक दूध भैंसों से ही प्राप्त होता है और ये ग्रामीण अर्थव्यवस्था को दूध, मांस तथा जुताई और ढुलाई के लिये भैंसा उपलब्ध कराती हैं। बाजार में भैंस का दूध गाय के दूध की तुलना में महंगा बिकता है क्योंकि भैंस के दूध में वसा की मात्रा अधिक पायी जाती है।

वैज्ञानिक भैंस पालन के लिये ध्यान देने योग्य बातें :-

(क) नस्ल का चुनाव :- इलाहाबाद और आसपास के जिलों के लिये मुर्रा तथा नीली - रावी नस्लें बेहतर दुग्ध उत्पादन के लिये तथा सूरती व भदावरी नस्लें घी उत्पादन के दृष्टिकोण से उपयुक्त हैं।

(ख) भैंस बीमा :- भैंस के प्रति १०० रुपये खरीद मूल्य पर ५ रुपये सालाना किश्त लेकर बीमा कंपनियां भैंसों का बीमा करती हैं। जबकि गरीबी रेखा के नीचे के लोगों को इस राशि का भी आधा ही देना पड़ता है। इस तरह से दुधारू भैंसों का बीमा करा के पशुपालक किसी प्रकार के जोखिम से बच सकते हैं। पशु की मौत होने पर ७ दिन के अंदर बीमा कम्पनी को सूचित करके तथा ३० दिन के भीतर जरूरी कागजात उपलब्ध कराके बीमा की रकम वापस पायी जा सकती है।

(ग) पशुशाला :- औसतन डेढ़ कट्ठे का रकबा ५ भैंसों तथा उनके पाड़ा-पाड़ी के लिये पर्याप्त होता है। बाड़ा हमेशा पूरब-पश्चिम दिशा में बनाना चाहिये। बाड़े के सामने छायादार पेड़ और एक ओर पानी का हौज बनवाना चाहिये।

(घ) भैंस का खान-पान :-

१. ५०० कि.ग्रा. शरीर भार की भैंस को प्रतिदिन लगभग ५० लीटर पाने के साफ पानी की जरूरत पड़ती है।

२. ५०० कि.ग्रा. शरीर भार की भैंस को जीवन रक्षा के लिये १५-२० कि.ग्रा. सूखा चारा और २ कि.ग्रा. दाना मिश्रण अथवा ३०-४० कि. ग्रा. हरा चारा, ४-५ कि.ग्रा. सूखा चारा और १ कि.ग्रा. दाना मिश्रण की जरूरत पड़ती है। दूध देने वाली भैंस को इसके अतिरिक्त प्रति २.५ कि.ग्रा. दूध उत्पादन पर १ कि.ग्रा. अतिरिक्त दाना मिश्रण देना चाहिये।

३. दाना मिश्रण में ५० ग्राम नमक और ६० ग्राम हड्डी का चूरा या खड़िया जरूर मिला देना चाहिये।

४. चारे को काटकर खिलाने तथा दाने को पीसकर व भिगोकर खिलाने से इसकी उपयोगिता बढ़ जाती है तथा चारे दाने की बरबादी भी कम होती है।

५. भैंस को भली भांति धूप निकल जाने के बाद ही चरने भेजें अन्यथा उन्हें अफारा हो सकता है।

६. एक भैंस दिन भर में १०-१५ कि.ग्रा. तक हरी घास चर लेती है। घास खिलाने के दो घंटे के अंदर दाना नहीं खिलाना चाहिये अन्यथा भैंसों को अपच हो सकता है।

(च)पाड़ा-पाड़ी की देखभाल :-

१. पाड़ा-पाड़ी के जन्म के बाद ३-४ दिन तक उसे खीस/फेनुस/पेवसी जरूर पिलाना चाहिए। जन्म के बाद बच्चे की नाभि नाल को साफ ब्लेड से १ इंच छोड़कर काट देना चाहिये। एक माह की उम्र से पाड़ा-पाड़ी कोमल घास चबाने लगते हैं। इस समय से उन्हें मां के दूध के स्थान पर सपरेटा दूध और दो माह की उम्र से भूसे के पाड़ा-पाड़ी दाना मिश्रण देना शुरू कर देना चाहिए।

२. यदि नर पाड़े से जुताई/ढुलाई करानी है तो उसे ६ से ८ माह की उम्र में (बरसात छोड़कर) बधिया करा देना चाहिए।
३. पाड़ी के शरीर पर गरमी के दौरान ५-६ बार ताजे पानी का छिड़काव करने पर वह जल्दी बढ़ती है और ३०-३६ माह की उम्र में गाभिन हो सकती है।
४. पाड़ा-पाड़ी को बीच-बीच में कृमिरोधी दवा जरूर पिलवायें।

(छ)भैंसों की देखभाल :-

१. भैंसों के शरीर में पसीने की ग्रंथियां नहीं होती हैं। जिसके कारण उन्हें गरमी बहुत लगती है। भैंसों को गर्मी में छाया में बांधें तथा उन्हें ४-५ बार नहलायें।
२. सामान्यतः एक पाड़ी ३०-३६ माह की उम्र में पहली बार गरम होती है। १८-३६ घंटे तक गरम रहती है तथा मेल न कराने पर २१ - २३ दिन बाद फिर गरम होती है। भैंस के गरम होने पर ९-२४ घंटे के अंदर उसे खाली पेट दो बार मेल करवायें। भैंस बच्चा देने के १०० दिन बाद फिर गरम होती है।
३. भैंस को बच्चा ब्याने की अनुमानित तारीख के ६० दिन पहले सुखा देना चाहिये।
४. महीने में एक बार सभी जानवरों पर जूं-किलनीनाशी दवाओं का छिड़काव खुले मौसम में करना चाहिये।
५. चूंकि भैंस पोखर में लुढ़कना पसंद करती है। अतः उन्हें गर्मी से बचाने के लिये २-४ घंटा चराने के बाद २-३ घंटे पोखर के पानी में लुढ़कने दें। पोखर की जोंक से बचाने के लिये पोखर के पानी में ब्लीचिंग पाउडर डालें।
६. दिन में १-२ बार खुरैश करें। खुर की नियमित छंटाई करें।
७. खुर्रा, गलघोंटू, तिल्ली बुखार, लंगड़ी बुखार आदि छुतहे रोगों से बचाव के लिये बरसात के पहले मई-जून में टीका लगवायें।
८. बीमार जानवरों को स्वस्थ जानवरों से अलग रखें।

पृष्ठ सं० ८--का शेष

सिंचाई :-

- खेत में ५० कल्लों में बाली निकलने के १५-२० दिन बाद तक २-५ सेंटीमीटर पानी के साथ खेत में बनाये रखें।
- जब वाली के नीचे भाग के दोनों में नरम गुदा भर जाये तो खेत से जल निकासी कर दें ताकि कटाई समय भूमि सख्त होने से आसानी रहे। ऐसा करने से फसल गिरने की सम्भावना भी कम रहती है।

कटाई :-

- बालियां निकलने के ३०-३५ दिन बाद बालियों में दाना कड़ा हो जाए तथा तना और पत्तियां पीली पड़ जाये तो फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है। कुछ प्रजातियों में इस समय भी तना तथा पत्तियां कुछ हरी होती है पर दाना कड़ा हो जाता है।
- इस समय दोनों में २०-२४ प्रतिशत नमी होती है
- उक्त अवस्था में पहुँचते ही कटाई कर देनी चाहिए। यदि फसल को अधिक सुखने दिया जाये तो दाना गिरने से हानि होती है।

मढ़ाई :-

- कटाई के शीघ्र उपरान्त (१-२ दिन के अन्दर ही) मढ़ाई कर लेनी चाहिए।
- यदि मढ़ाई के लिए पांव या इंजन चलित पैडी थ्रेसर का प्रयोग किया जाये जो मढ़ाई आसानी से होती है तथा दानों की हानि भी कम होती है।

धान सुखाना :-

- यदि धान मन्डी में बेचना हो तो मढ़ाई के शीघ्र उपरान्त उसे वहाँ ले जाये ताकि सुखने की समस्या न हो।
- मढ़ाई के बाद भन्डारण से पहने दानों की नमी को सुखा कर १२-१४ प्रतिशत तक लाना आवश्यक है।
- सुखाई धीरे-धीरे छाया में करनी चाहिए धूप में नहीं।
- यदि सुखाई धूप में करना हो तो रात के समय ढेर को ढांक देना चाहिए क्योंकि यदि दानों पर ओस पड़ जाती है तो धूप में सुखाने से दाने टूट कर निकलते है तथा मन्डी में कीमत कम मिलती है।

शुभ वृक्षारोपण - एक संक्षिप्त विवरण

प्रो० (डा०) मो० कलीम
विभागाध्यक्ष
पादप प्रजनन, आनुवांशिकी एवं
बीज प्रौद्योगिकी विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

प्रो० (डा०) एस०बी० लाल
निदेशक शोध
संकायाध्यक्ष
वानिकी महाद्यिालय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

मो० हलीम खान
शोध छात्र
मृदा एवं पर्यावरण विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०,
इलाहाबाद

वृक्षारोपण कार्य महान, एक वृक्ष सौ पुत्र समान

सूखा, बाढ़, अकाल एवं प्रदूषण से बचाव के लिए तथा वनों की कमी को पूरा करने के लिए एवं समाज के समग्र विकास के लिए आज इस बात की आवश्यकता है कि पौधों का रोपण खाली पड़ी बंजर/परती/ऊसर, ग्राम समाज की भूमि, सड़क की पटरियों, नहरों तथा रेल पथ के किनारे, खेतों की मेड़ भवनों, पूजा स्थलों तथा कुआं व जलाशयों के चारों ओर करें तथा जिस भूमि पर अच्छी खेती संभव नहीं है। उन पर फल वृक्षों आदि की खेती करके अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। फसलों की ही तरह भूमि की उपयुक्तता एवं अपनी आवश्यकता के आधार पर वृक्ष प्रजातियों का चयन बहुत ही आवश्यक है।

वनों के महत्व एवं उपयोग के बारे में ग्रामीण क्षेत्रों में एक कहावत प्रचलित है। ''आधी खेती आधी बारी''। वृक्षारोपण की सफलता प्रजातियों के सही चुनाव, रोपण के तरीके तथा प्रभावी रखरखाव पर निर्भर करती है। वृक्षारोपण हेतु वर्षा ऋतु सबसे अधिक उपयोगी है। वर्षा के पानी एवं मौसम का हमें भरपूर लाभ उठाकर, इस मौसम में पेड़ लगाने की कोशिश करनी चाहिए। वृक्षारोपण साधारण भूमि तथा ऊसर भूमि पर किया जा सकता है। इस संबंध में अलग-अलग आवश्यक निर्देश व सुझाव निम्नलिखित हैं।

१. साधारण भूमि में वृक्षारोपण -

(अ) गड्ढों का आकार :-

१. सामान्यतया गड्ढे का आकार लगभग १.५ फीट, ल०चौ० व गहराई (४५ × ४५ × ४५ सेमी०) का होना चाहिए।

२. खोदी गई मिट्टी को ऋतुरक्षण हेतु गड्ढों के पास एकत्र करें।

३. जो गड्ढा खड़े वृक्ष के निकट है। उसकी दूरी खड़े वृक्ष से कम से कम १.५ मीटर होनी चाहिए।

४. गड्ढों का खुदान समोच्च पंक्तियों में होना चाहिए।

५. गड्ढों में एल्ड्रीन/गैमेक्सीन दो चुटकी (१० ग्राम) जल देनी चाहिए।

६. वर्षा के पूर्व (जून के पूर्वाहन) में ही खोदें तथा मिट्टी को कंकड़ पत्थर एवं कूड़ा कारकट से साफ कर वापस गड्ढे में डाल देना चाहिए ताकि गड्ढा सामान्य भू-भाग के ऊपर तक भुरभुरी मिट्टी से भर जाये।

७. रोपण क्षेत्र की सुरक्षा तार बाड़ अथवा सुरक्षा खाई तथा प्राकृतिक बाड़ लगाकर की जा सकती है। इनमें दूसरा तरीका सस्ता तथा अधिक प्रभावी है।

(ब.) रोपण में सावधानियां -

१. पौधों को कभी कालर पकड़कर नहीं उठाना चाहिए। बल्कि नीचे से हाथ लगाकर सावधानी से उठायें।

२. सावधानीपूर्वक निकाले गये पौधों की पिण्डी से बंधी घास, टाट या पालिथीन थैली को सावधानी से दूर फेंके व चिपटी हुई घास को निकाल दें। पौधा रोपित करते समय उनकी जड़ों को मुड़ने या उलझने से बचायें।

३. पौधों को गड्ढे में मिट्टी निकालकर इस प्रकार रखना चाहिए कि भूमि सतह से पिण्डी का

१/३ भाग ऊपर तथा २/३ भाग गड्ढों के अन्दर रहें। इससे पौधों की जड़ों में पर्याप्त वातन होगा। इसके बाद पौध के चारों और की मिट्टी को मूल संधि (कालर) तक अच्छी तरह दबाकर भर देना चाहिए। मूल संधि का भूसतह से थोड़ा ऊपर रहना आवश्यक है। वर्षा ऋतु के व्यवस्थापन के बाद मूल संधि भू सतह पर आ जायेंगी।

४. पौध कभी भी पानी भरे गड्ढे में नहीं लगाना चाहिए। यदि किसी कारण तथा गड्ढे में पानी भर गया हो तो गड्ढे से पानी निकाल देना चाहिए।
५. पौध लगाने के बाद उसमें लगभग आधी बाल्टी पानी डालना चाहिए।
६. रोपण का समय लगभग सायंकाल सूर्यास्त के समय सर्वोत्तम रहता है।
७. वर्षाकालीन रोपण माह जुलाई में पूरा हो जाना चाहिए।
८. वर्षाकालीन रोपण के असफल पौधों की गैप फिलिंग अगस्त के अन्त तक हो जानी चाहिए।

(स) रोपित पौधों का रख-रखाव -

१. रोपण के बाद पौधे मर जायें उसके स्थान पर तुरंत उसी ऊंचाई एवं प्रजाति के दूसरे पौधों की सहायता से गैप फिलिंग कर देनी चाहिए।
२. सही तरीके से सिंचाई करने के लिए पौधों के चारों ओर गोलाई में १.२५ मीटर व्यास तथा १५ सेमी० गहराई का थाला बना देना चाहिए।
३. वृक्षारोपण में आवश्यकतानुसार नियमित सिंचाई की जानी चाहिए। जैट्रोफा (बायोडीजल पादप) के पौधों में भी यह क्रिया जरूरी है।

माह सितम्बर से माह जून (वर्षा प्रारम्भ होने तक) की अवधि में जब भी भूमि में नमी की कमी मालूम पड़े पानी देना चाहिए। सामान्य तथा भूमि की आवश्यकता को देखते हुए निम्न सिंचाई की जानी चाहिए-

जुलाई	सिंचाई की आवश्यकता नहीं
अगस्त	सिंचाई की आवश्यकता नहीं
सितम्बर	एक सिंचाई
अक्टूबर	एक सिंचाई
नवम्बर	एक सिंचाई
दिसम्बर	एक सिंचाई
जनवरी	एक सिंचाई
फरवरी	एक सिंचाई
मार्च	एक सिंचाई
अप्रैल	तीन सिंचाई
मई	तीन सिंचाई
जून	दो-तीन सिंचाई

४. पेड़ की जड़ों के आधार के पास नमी की संरक्षण व वृद्धि के उद्देश्य से थाले को खरपतवार व पत्तों से ढंक देना चाहिए तथा वह पानी वाष्पीकृत हो।
५. पौध लगाने के १५-२० दिन बाद पहली निराई, उसके बाद वर्षा ऋतु समाप्त हो जाने के बाद सितम्बर के आखिरी पखवाड़े में दूसरी निराई, गुड़ाई हो जानी चाहिए। माह फरवरी में तीसरी निराई गुड़ाई के साथ पौधों पर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।
६. अच्छी बढ़त के लिए पौधों के रासायनिक व वानस्पतिक खाद मृदा परीक्षण के अनुसार दे देनी चाहिए।

(२) ऊसर क्षेत्र में वृक्षारोपण :-

(अ) प्रजाति का चयन :- मिट्टी एक जिन्दा ईकाई है, ऊसर इसका दीर्घकालीन रोग है। जो इस रोग को समझेंगे वही इसका इलाज कर पायेंगे। अन्यथा रोग और उग्र हो सकता है। इस रोग के इलाज के लिए बड़े सब्र, अथक परिश्रम एवं सूझ-बूझ की आवश्यकता है। उ०प्र० शासन प्रदेश की ऊसर अभिशप्त भूमि को स्वस्थ एवं उपयोगी बनाने हेतु कृत संकल्प है। वन विभाग इस पुनीत कार्य में मुख्य भूमिका निभा रहा है।

ऊसर क्षेत्र को पुनः आबाद करने में वृक्षारोपण एक प्रभावी इलाज सिद्ध हुआ है। ऊसर में वृक्षारोपण का मुख्य उद्देश्य यह होगा कि क्षेत्र को वृक्षों से ढंक दिया जाए, चाहे वह आर्थिक दृष्टिकोण से कीमती हो या नहीं - वृक्षों का मुख्य कार्य मृदा एवं वातावरण में सुधार एवं सुरक्षा करना है। इस प्रकार से कम कीमती प्रजातियां भी सुधार के लिए उपयोगी होंगी। यदि वे ऊसरीली मिट्टी में भी जीवित रह सकें।

नीचे निम्नलिखित कुछ प्रजातियों की सूची दी जा रही है। इनके अलावा अन्य प्रजातियां भी उपयुक्त हो सकती हैं। जिनका परीक्षण अनुभव के आधार पर करना चाहिए।

(१) भूमि के पी०एच० (ऊसरीलापन) के परिणाम के अनुसार :-

(क)	मृदा पी०एच० मान ७.५-८.५	प्रजातियां उपयुक्त शीशम, महुआ, जैट्रोफा, करंज, बांस, नीम, बकायन, ठाक, यूकेलिप्टस, आंवला, खेर, सू-बबूल तथा बबूल आदि।
	८.५-९.० तक	बबूल, विलायती बबूल, जंगली जलेबी, नील सिरस, ढाक, कंजी, अर्जुन, अकेसिया, अरिकुलीकार्मिस, बांस आदि।
	९ से अधिक पी०एच० मान की मिट्टी पर	सिंरस, ढाक, विलायती बबूल तथा अकेसिया-अरिकुली फार्मिस।

(१) ईंधन हेतु - विलायती बबूल, जंगल जलेबी, सिरस व सू बबूल आदि।

(२) चारापत्ती जंगल जलेबी, नीम, सिरस व सू बबूल आदि

(३) लघुकाष्ठ हेतु सिरस (काला), शीशम बांस आदि

(ब) वृक्षारोपण की विधि :-

(१) वृक्षारोपण करने से पूर्व भूमि के पी०एच० मान की जांच तथा आवश्यक मृदा परीक्षण अनिवार्य रूप से कराया जाये। जिससे कंकड़ की सतह, भूमि में पौधों के लिए आवश्यक तत्वों की मात्रा, भूमि की संरचना आदि के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाये। बिना इस सूचना के वृक्षारोपण कार्य न किया जाये। यदि क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा न हो तो भी वृक्षारोपण न किया जाये।

(२) जिस स्थान पर कंकड़ की पतली पट्टी पायी जाये वहां कंकड़ की पट्टी के उस भाग जो रोपण के गड्ढे के नीचे आ रही हो, अवश्य तोड़ दिया जाये।

(३) ऊसर भूमि में सामान्यतया १ मी० X १ मी० X १ मी० माप के गड्ढे खोदे जायें अथवा १.५ मीटर गहरे व ६० सेमी० व्यास के गड्ढे खोदे जायें - कम से कम ०.५ घन मी० प्रति गड्ढा मिट्टी खोदकर निकाली जाये। रेखीय खाइयों का प्रयोग न किया जाये। क्योंकि इसमें ऊसर सुधार कार्य में काफी कठिनाई होती है। गड्ढे की गहराई कंकड़ पर्त तक करनी चाहिए। कंकड़ पर्त अवश्य तोड़ दें।

पी०एच०	गोबर की खाद (किलो/गड्ढा)	पाइराइट/जिप्सम ऊसर तोड़ (किलो/गड्ढा)	विशेष
८-८.५	४-५	२	इस मात्रा को मृदा परीक्षण के आधार पर निश्चित किया जाये।
८.५-९.०	५-६	२	गोबर की खाद तथा पाइराइट आदि सामान्य मिट्टी एवं बालू की आवश्यक मात्रा में मिला लें।
९.०-९.५	६-८	२.५	
९.५-१०.५	८-१०	३	

(४) प्रत्येक गड्ढे से निकली हुई मिट्टी / बदली हुई मिट्टी में पी०एच० के अनुसार निम्न मात्रा में गोबर की खाद व पाइराइट या ऊसर तोड़ जिप्सम को अच्छी तरह मिलाया जाये। यह कार्य गड्ढो के खुदने के लगभग १ माह बाद शुरू किया जाय तथा माह जनवरी के द्वितीय सप्ताह तक समाप्त कर दिया जाये ताकि जाड़े की वर्षा का भी लाभ लिया जा सके।

(५) प्रत्येक माह में कम से कम एक बार गड्ढो को पानी से अवश्य भर दिया जाये।

(६) वर्षा के पूर्व (माह जून के पूर्वाद्ध में) जब गड्ढों को मिट्टी से भरा जाये तो उसकी लगभग २५ सेमी ऊंचाई खाली रखी जाये। इस २५ सेमी० की मिट्टी के गड्ढों के चारों ओर मेड़ बनाकर रख दिया जाये जिससे लीचिंग द्वारा (निक्षालन) गड्ढे के किनारे की भूमि में भी सुधार हो सके और गड्ढों में भरी हुई मिट्टी के ऊपर अधिक मात्रा में पानी एकत्र हो जाये। इस गड्ढे के अन्दर रासायनिक प्रक्रिया हो सकेगी।

(७) रोपण के पूर्व उपरोक्त संख्या - ६ में किनारे बनाई मेड़ की मिट्टी गड्ढे में चेक भर दी जाये, कुछ गड्ढे की मिट्टी व पी०एच०, लिटमस पेपर की सहायता से टेस्ट कर लिया जाये जिससे ज्ञात हो सके कि उपरोक्त प्रणाली से कितना भूमि सुधार हुआ है। रोपण कार्य, रोपण क्षेत्र में कम से कम दो वर्षा हो जाने के बाद ही किया जाये।

(८) ऊसर क्षेत्र में सुरक्षा नाली की मेड़ की मिट्टी में भी उपर्युक्त दी गई मात्रा के अनुसार पाइराईट या ऊसर तोड़ जिप्सम मिला दिया जाये, तत्पश्चात उसमें माह जून में एक सिंचाई देकर वृक्षों की उपर्युक्त प्रजाति के बीजों को बोया जाये। यदि वर्षाकाल के आरम्भ में बीज उगते हैं तो वर्षाकाल में दुबारा प्रयास किया जाये।

(९) ऊसर क्षेत्र की सुरक्षा नाली की मेड़ पर उपर्युक्त प्रजाति के बाड़ का रोपण किया जाये।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :-

कार्यालय
निदेशक शोध एवं संकायाध्यक्ष वानिकी
महाविद्यालय
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

पृष्ठ सं० १९--का शेष

क्षरण भी रूकेगा। साथ ही फलत आने तक यह आमदनी का अच्छा स्रोत रहेगी।

कद्दूवर्गीय सब्जियों को २०-३० सेमी० गड्ढे में जिसमें गोबर की बाद पलटी हुई मिट्टी भरी हो लगाने पर प्रति हेक्टेयर उत्पादन अधिक मिलता है। यदि अमरूद व आंवला की बाग है तो किसान भाई उसमें

१. लौकी को लगाकर प्रथम वर्ष १५, द्वितीय वर्ष २२ व तृतीय वर्ष २५ क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज ले सकते हैं।

२. पालक से ३.४ व तृतीय वर्ष ५ क्विंटल तक उपज मिल सकती है। वही टमाटर से ३.४ व ४.५ क्विंटल प्रति हेक्टेयर व पत्ता गोभी से २.५, ३.५ व ४ क्विंटल प्रथम द्वितीय व तृतीय वर्ष अतिरिक्त उपज मिल सकती है।

प्रथम वर्ष में आंवला, अमरूद की बाग सब्जियों को अन्तरासस्यन सहित लगाने पर ९७०० से १०,९५० रुपये प्रति हेक्टेयर तक आएगी परंतु एक बार बाग स्थापित हो जाने पर सब्जियों से ही किसान भाई अपनी अतिरिक्त लागत को पूरा कर सकते हैं और मुनाफा भी प्राप्त कर सकते हैं।

गन्ना तथा पोदीना की सह-खेती

डा० ए०के० चौरसिया
सहायक प्राध्यापक
आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० दिनेश कुमार
सहायक प्राध्यापक
कृषि अर्थशास्त्र एवं ग्रामीण समाजशास्त्र विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

गन्ने के साथ (मिंट) पोदीना की खेती लाभकारी होने के साथ-साथ एक ऐसी तकनीकी भी है जो सौर-उर्जा भूमि जल और जैसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्रोतो का भरपूर उपयोग सुनिश्चित करती है। जैसा कि आप जानते है, गन्ने का जमाव लगभग ३० से ४५ दिन में होता है। प्रारम्भ में इसकी वृद्धि कम होतही है और पंक्तियों के बीच की जगह को पूर्णतया ढकने पर प्राय यह देखा गया है कि पक्तियों के बीच की जगह में खर-पतवार उग आते हैं इस कारण गन्ने की फसल को अधिक खाद तथा पानी की आवश्यकता पड़ती है और कृषकों के उपर अनावश्यक खर्चो का अतिरिक्त भार पड़ता है। इस समस्या का समाधान करने के लिए ऐसा सोचा गया की प्रारम्भ में खर-पतवार को न उगने दिया जाय। पिपरमिंट, परगामांट मिंट तथा स्पियरमिंट इस प्रकार की फसले हैं जिन्हें शरद व बसंत ऋतु में बोये गये गन्ने के साथ एक उपयुक्त अन्त फसल के रूप में उगाया जा सकता है। ये फसलें अत्यन्त लाभकारी होने के साथ-साथ श्रमयुक्त भी है तथा उत्तर प्रदेश के गन्ने वाले तराई क्षेत्र में उगायी जाती है। पोदीना को गन्ने के साथ अन्त फसल के रूप में उगाने की तकनीकी विकसित की गयी है जो निम्नलिखित है-

बुआई :- शरद ऋतु में बोये गये गन्ने के साथ, पिपरमिंट, बरगामांट मिंट, स्पियरमिंट आदर्श अन्त फसलें है। गन्ने की मुख्य प्रजातियों सी. ओ. ११४८ तथा सी.ओ० ११५८ की अक्टूबर की अंतिम सप्ताह में पंक्तिबद्ध रूप में ६० सेमी० की दूरी बुआई करनी चाहिए तथा अक्टूबर के अंतिम सप्ताह में मिंट की दो पक्तियों, ४५ सेमी० के अन्तर पर लगानी चाहिए। गन्ने के अच्छे अंकुरण के लिए मिंट तथा गन्ने की बुआई में तीन सप्ताह का अन्तर आवश्यक है क्योंकि मिंट की बुआई के बाद खेत की सिंचाई तुरन्त करनी पड़ती है। दोनों फसलों को पर्याप्त रूप से और प्रकाश प्रदान करने के लिए पौधों की पंक्तिबद्ध व्यवस्था आवश्यक है। यह पद्धति अपनाने में जो मुख्य समस्या होती है, वह है पोदीना द्वारा गन्ने की वृद्धि में रूकावट होना। प्रारम्भ में ही गन्ने के पौधें की संख्या में आंख बुआई विधि को अपनाकर इस स्थिति को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। बसंत ऋतु में बोये गये गन्ने के साथ परगामांट मिंट, जापानी मिंट, स्पियरमिंट व पिपरमिंट उपयुक्त अन्तफसलें हैं। बसंत ऋतु में भी शरद ऋतु की तरह ही अन्तराल व पंक्तिबद्ध व्यवस्था प्रयोग में लायी जानी चाहिए।

उर्वरक का प्रयोग :- इस पद्धति में दो फसलों की वृद्धि ऐ साथ होती है अत दोनो फसलों को उपयुक्त पोषण की आवश्यकता एक साथ पूरा करना जरूरी है। अतः खेत की अंतिम तैयारी के समय में फास्फोरस व पोटैशियम, प्रत्येक की १०० किग्र० मात्रा प्रति हेक्टेयर ३०० किग्रा० नत्रजन की एक तिहाई पोदीना के अंकुरण के बाद एक तिहाई पहली कटाई के बाद तथा शेष मात्र पोदीना की दूसरी व अंतिम कटाई के ठीक बाद तथा बसंत ऋतु में बोई गई फसलों के लिए प्रति हेक्टेयर २५० किग्रा० नाईटोजन आधी मात्रा के अंकुरण के बाद और शेष मात्रा पहली व अंतिम कटाई के बाद आवश्यकता होती है।

सिंचाई :- पोदीना को विशेष रूप से गर्मी के महीनों (मार्च-मई) में सिंचाई की कई बार आवश्यकता पड़ती है। अत खेतकी ६ से १० दिन के अन्तर पर सिंचाई कर देनी चाहिए। शरद ऋतु (नवम्बर-फरवरी) में यह १५ से २१ दिनों के अन्तर पर करनी चाहिए। सिंचाई उपर्युक्त उर्वरक की मात्रा ठीक समय पर देने से पोदीना तथा गन्ना दोनों की वृद्धि

ठीक होती है। मई के बाद मानसून आने तक भूमि में ७५ प्रतिशत नमी को बनाये रखना चाहिए। ऐसा करने के लिए गन्ने के खेतों को मौसम के अनुसार १० से १२ दिनों के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए।

निराई तथा गुड़ाई :- शरद तथा बसंत ऋतु में बोये गये गन्ना तथा पोदीना को ३ से ४ बार निराई करने की आवश्यकता पड़ती है जब तक कि गन्ना पूरी तरह फैलकर पंक्तियों के बीच के स्थान को ढंक न लें। पोदीना की जड़ो के भूमिगत टुकड़ों को सड़ने के लिए पोदीना की आखिरी कटाई के बाद सिंचाई करें। यदि आवश्यकता हो तो खेत को गुड़ाई द्वारा पलट देना चाहिए। खेती-बारी के शेष आवश्यक कार्य जैसे कि गन्ने की खेती के आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

पौधों की प्रमुख बिमारियां तथा उनकी रोकथामः- गन्ने व पोदीना की अन्त फसलों के खेतों में दीमक तथा गन्ना बंधक और पत्ति खाने वाला कैटरपिलर मुख्य कीट है। भूमि की तैयारी के समय १०० प्रतिशत बी०एच०सी० अथवा एल्डिन पाउडर के २० से २५ किग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से दीमक के आक्रमण को कम किया जा सकता है। उसके बाद ०.०२५ प्रतिशत फास्फेमिडौन डीमेक्रान और क्विपैपलफोश एकालक्स के दो से तीन छिड़काव क्रमश गन्ना बेधक व पत्ती भक्षक कैटरपिलर पर अत्यन्त प्रभावकारी होता है। पोदीना की कटाई के बाद बार-बार सिंचाई करने से भी दीमक के आक्रमण को रोका जा सकता है।

पोदीना की कटाई तथा तेल का आसवनः- शरद ऋतु में बोये गये पोदीने से दो कटाई (मार्च-मई) मिलती है तथा बसंत ऋतु में बोये गये फसल से केवल एक कटाई (मई) मिलती है। उसके बाद गन्ना पोदीने की वृद्धि में अवरोध उत्पन्न कर देता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि पोदीने की कटाई स्वच्छ व धूप वाले दिनों में हो ताकि फसल का जमीन से उपर के भाग से तेल भाप आसवन विधि से निकाला जा सके।

उत्पादन व लाभ :- केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान के पंतनगर क्षेत्रीय केन्द्र में १९८३ तथा १९८५ में किये गये परीक्षणों से यह पाया गया है कि पोदीना को शरदकालीन गन्ने व बसंत ऋतु के गन्ने के साथ एक अन्तफसल के रूप में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। बसन्त ऋतु की उपेक्षा शरद ऋतु में बोये गये पोदीने से अधिक पैदावार एवं लाभ प्राप्त होता है। यद्यपि अन्तःफसलीकरण से गन्ने के उत्पादन में १८ से ३८ प्रतिशत तक की कमी आ जाती है, लेकिन पोदीने के तेल के रूप में अतिरिक्त उत्पादन से कुल अर्जित लाभ में आशातीत बढ़ोतरी होती है। शरद ऋतु में केवल गन्ने की फसल से ३६००० रुपये प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ होता है जबकि इसकी तुलना में शरद ऋतु में गन्ने और बरगामांट पोदीने की सघन खेती से ४६००० रुपये प्रति हेक्टेयर का शुद्ध लाभ होता है, जबकि इसकी तुलना में इसी ऋतु में गन्ने तथा जापानी पोदीने की सह-खेती से ३९००० रुपये की आय होती है। यह देखते हुए कि हमारे देश में छोटे तथा मध्यम किसानों के पास कम जमीन है, भूमि के उपयोग की क्षमता में १६-४० प्रतिशत तक की वृद्धि एक बड़ी उपलब्धि है।

अतः किसान भाइयों को चाहिए कि उपरोक्त विधि को अपनाकर एवं अपने पास उपलब्ध संसाधनों का उचित ढंग से उपयोग करके अधिक से अधिक लाभ कमायें।

पृष्ठ सं० ११--का शेष

हैं। दूध का सुवास एवं स्वाद ही बदल जाते हैं। यह धातु क्षारीय विलियन में घुलनशील होती है इसलिये इस धातु के बने बर्तनों को कभी भी क्षारीय धावन विलियन से नही धोना चाहीये। यह लोहा तथा इस्पात पर कोटिंग करने के काम आता है। ऐसे लोहे को गल्वेनाइज्ड लोहा कहते हैं। इससे बने बर्तन कभी भी दूध के कार्य में प्रयोग नही करना चाहियें।

एक विश्लेषण

गेहूं आयात

डा० नाहर सिंह
प्राध्यापक
कृषि अर्थशास्त्र एवं ग्रामीण समाजशास्त्र विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० ए०के० चौरसिया
सहायक प्राध्यापक
आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

डा० दिनेश कुमार
सहायक प्राध्यापक
कृषि अर्थशास्त्र एवं ग्रामीण समाजशास्त्र विभाग
ए०ए०आई०-डी०यू०, इलाहाबाद

कृषि प्रधान देश होने के बावजूद भारतीय किसानों की दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है। एक ऐसे देश में जहां करीब ६० प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर हो वहां यदि किसान खेती को घाटे का सौदा मानने लगे तो यह गंभीर चिंता का विषय बनना चाहिए। भारतीय कृषि जिन अनेक समस्याओं से दो चार है उनके संदर्भ में सभी को पर्याप्त जानकारी होने के साथ ही यह भी पता है कि क्या करने की आवश्यकता है। इसके बावजूद परिणाम यह है कि जहां सेवा क्षेत्र की विकास दर ८.५ फीसदी तथा उद्योग क्षेत्र की ८ फीसदी है। वहीं कृषि क्षेत्र की विकास दर ३ फीसदी से भी कम है। कृषि क्षेत्र की दुर्बलता हमारी समस्त अर्थव्यवस्था को विकास की पटरी से बाहर करने वाली साबित हो सकती है, क्योंकि कृषि अभी भी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। यदि गौर से देखा जाय तो इस समय देश में गेहूं की बढ़ी कीमतों का फायदा व्यापारी वर्ग ही अधिक उठा रहा है अथवा इससे उन देशों के गेंहू उत्पादक किसान उठा रहे हैं। जिन मुल्कों से गेहूं का आयात किया जा रहा है। विगत वर्षों में देश में गेहूं का कुल उत्पादन सन् १९९८-९९ में ७.१२ करोड़ टन था। १९९९-२००० में ७.६७, २०००-०१ में ६.९६, २००१-०२ में ७.२७, २००२-०३ में ६.५७ करोड़ टन उत्पादन प्राप्त हुआ। विगत छः वर्षों में औसतन ७.१४ करोड़ टन का सर्वाधिक उत्पादन वर्ष १९९९-२००० में ७.६७ करोड़ टन तथा सबसे कम ६.५७ करोड़ टन सूखा वाले वर्ष २००२-०३ में प्राप्त हुआ। सात वर्ष पूर्व १९९८-९९ में सरकार ने १५ लाख टन गेहूं आयात किया था। इस वर्ष जब देश में २६५ लाख हेक्टेयर में गेहूं की बुवाई की गयी थी तथा इससे अनुमानतः ७.३० करोड़ टन उत्पादन प्राप्त करने का लक्ष्य था इसके बावजूद सरकार ने पुनः ५ लाख टन गेहूं आयात करने का फैसला किया।

एक अनुमान के मुताबिक बढ़ती जनसंख्या की जरूरतों के मद्देनजर सन् २०२० तक देश को लगभग १० करोड़ ९० लाख टन गेहूं की आवश्यकता होगी अर्थात् आने वाले १४ वर्षों में मौजूदा उत्पादन की तुलना में लगभग ३ करोड़ ६० करोड़ टन और भी बढ़ाना होगा और यह वृद्धि भी मूलतः प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि करके ही प्राप्त करनी होगी। देश में वर्तमान समय में इस फसल की औसत उत्पादकता लगभग २७०७ किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की जिसे आगे चलकर उत्पादन के २०२० वाले लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अनुमानतः ३००० किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक बढ़ाना होगा। बाजार में गेहूं का भाव निरन्तर बढ़ रहा है और अब वह आम आदमी की क्रय शक्ति के पहुंच के बाहर हो रहा है। ऐसे में उत्पादन खर्च के बढ़ते दायरे तथा लगभग स्थिर समर्थन मूल्य के चलते किसानों के लिए गेहूं उत्पादन अब घाटे का सौदा साबित हो रहा है। पूर्व में सन् १९९०-९१ में गेहूं का समर्थन मूल्य २१५ रुपये प्रति कुन्तल था जो १५ वर्षों बाद वर्ष २००६-०७ में बढ़कर भी ६५० रुपये प्रति कुन्तल तक ही पहुंचा है। जबकि इसके उत्पादन लागत में बहुत ज्यादा बढ़ोत्तरी हुआ है। वैसे इस समय खुले बाजार में गेहूं का भाव ८०० से ९५० रुपये प्रति कुन्तल चल रहे हो तो सरकार को वर्तमान समर्थन मूल्य (रु० ६५० प्रति कुन्तल) पर कितना गेहूं उपलब्ध होगा।

खुले बाजार में गेहूं की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध कराने और गेहूं के जारी मूल्य को स्थिर रखने के सबब भारतीय खाद्य निगम ने दिसम्बर २००५ में १.८५ लाख टन तथा जनवरी २००६ के पहले हफ्ते में १.५ लाख टन गेहूं तथा जनवरी के दूसरे सप्ताह में ६३ हजार टन गेहूं उपलब्ध कराया था। इसके चलते जनवरी २००६ के बाद गेहूं के मूल्यों में कुछ स्थिरता एवं गिरावट भी देखी गयी है। हालांकि सरकार ने ताबड़तोड़ ५ लाख टन गेहूं आस्ट्रेलिया से आयात करने की घोषणा की, जिसकी दो खेप भारतीय अधिकारियों द्वारा गुणवत्ता पर प्रश्न उठाये जाने के बाद आस्ट्रेलिया में रोक दी गयी। इसी तारतम्य में भारत सरकार द्वारा ३० लाख टन गेहूं और आयात करने हेतु टेंडर आमंत्रित किये जा चुके हैं। इसके बावजूद गेहूं के भाव कम होते नहीं दिखते। वैसे तो गेहूं के रबी विपणन सत्र २००६-०७ में सरकारी खरीद के बड़े दावे हैं परन्तु सरकारी रेड टेपिज्म कार्य प्रणाली की शिथिलता के चलते इसको अंजाम देना संभव नहीं है। सौभाग्य से जिन देशों से गेहूं का आयात किया जा रहा है। इतनी बड़ी मात्रा में कृषि की सिंचित भूमि नहीं है जितनी कि अपने देश में हैं। यूरोपीय तथा पश्चिमी देशों में अधिकतर वर्ष में एक ही बार फसलें उगायी जाती हैं।

अतः जरूरत है तो कृषि के क्षेत्र में जागरण की कार्यक्षमता में वृद्धि की, कृषि में प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ाने की नई सक्षम कृषि तकनीकी को खेतों में उतारने की तथा अंततः कृषि दर को बढ़ाने की। खेती केवल अकेले गरीब किसानों के या प्रकृति के भरोसे नहीं प्रगति कर सकती। इसके लिए सरकार द्वारा भी कृषि के क्षेत्र में निर्णायक पहल करने की जरूरत है। कृषि सुधारों को लागू करने तथा कृषि में सरकारी निवेश को और बढ़ाने की आवश्यकता है। यदि सभी मिलकर गंभीरतापूर्वक प्रयास करें तो देश में मौजूदा रूप में २६५ लाख हेक्टेयर में होने वाली गेहूं की खेती तथा ५५० लाख हेक्टेयर में की जाने वाली भारतीय कृषि में दूसरी बार मौजूदा ५ लाख टन गेहूं आयात करने के बाद अगली बार विश्व को १५ लाख टन गेहूं के निर्यात का तोहफा प्रदान कर सकते हैं। उल्लेखनीय है कि लक्ष्यों की पूर्ति तो हमारे कर्तव्य का अंग है ही किन्तु हमारा सर्वोपरि लक्ष्य कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाना है।

पृष्ठ सं० १४--का शेष

दूध को कमरे के तापमान तक ठंडा करें और २-३ बूंद आयोडीन घोल (१ प्रतिशत) को उसमें मिलाएं। नीला रंग आने पर दूध में मैदा आदि की मिलावट की पुष्टि होती है।

(३)चीनी की मिलावट :- दूध में चीनी मिलाने से उसका आपेक्षिक घनत्व बढ़ जाता है। इससे दूध में पानी मिला होने का पता नहीं लगाया जा सकता है। चीनी मिले दूध का जांच इस प्रकार से किया जाता है। परखनली में १० मिली० दूध लें और १ मिली० हाइड्रोक्लोरिक अम्ल डालकर मिलाएं। इसमें ०.१ ग्राम रिसार्सिनाल (resorcinol) चूर्ण मिलाएं एवं परखनली को उबलते पानी में ५ मिनट तक रखें। परखनली में लाल रंग प्रकट होना दूध में चीनी मिले होने की पुष्टि करता है।

(४)खाने का सोडा (सोडियम बाई कार्बोनेट) या सोडियम कार्बनेट की मिलावट :- दूध में खाने का सोडा मिलाने से लैक्टिक अम्ल उदासीन हो जाता है और दूध ज्यादा समय के लिए रखा जा सकता है। इसका पता इस प्रकार से लगाया जाता है - परखनली में १० मिली० दूध लें तथा उतना ही ऐथिल ऐल्कोहल डालकर अच्छी तरह मिलाएं परखनली में ३-४ बूंद जलीय राजोलिक अम्ल (rosolic acid) डालकर हिलाएं। लाल रंग दूध में सोडा होने की पुष्टि करता है।

अधिक जानकारी के लिए डेरी प्रोद्योगिकी विभाग में सम्पर्क करें।

मोती की खेती आमदनी देती

डा० विपाशा डेविड
सह प्रशिक्षिका (मत्स्य पालन)
कृषि विज्ञान केन्द
इलाहाबाद

मछली पालन के तरह मोती पालन भी पर्यावरण अनुकूल प्रक्रिया है। इससे न केवल रोजगार मिल सकता है, बल्कि गरीबी उन्मूलन, अतिरिक्त आय तथा विदेशी मुद्रा अर्जन में सहायक सिद्ध हो सकता है। मीठे जल मोती उत्पादन अनेक तरह से लाभप्रद व्यवसाय है –

(१) क्योंकि इन सीपों को आसानी से संग्रह किया जा सकता है।
(२) समुद्र से दूर के राज्यों में भी इनका खेती की जा सकती है।
(३) आसान और कम खर्चीली शल्य क्रिया ।
(४) सरल तालाब प्रबन्धन ।
(५) सीपों को नुकसान करने वाले जीव – जन्तु तालाब में न होना प्रमुख कारण है।

मोती क्या है? :– सीप के अंदर पाए जाने वाला रत्न मोती। जो अपने रंग, सुन्दरता, चमकीलापन के कारण धरती पर पाए जाने वाला अन्य रत्नों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बीसवीं सदी के पूर्व तक मोती पालन के तकनीकी का विकास नहीं हुआ था। तब प्राकृतिक मोती अति दुर्लभ एवं कीमती होते थे। मोती निर्माण के बारे में अनेक कहानियां प्रचलित हैं। पूर्व के देशों में इसे भगवान के अश्रु और शक्ति के रूप में माना जाता है। वहीं भारतीयों के अनुसार मोती सुख का परिचायक है, चीनियों के अनुसार यह समृद्धि और मिस्रों के अनुसार यह प्यार का संबोधन है।

मोती कैसे बनाते हैं? :– प्राकृतिक मोती के बनने में बाहरी कणों जैसे बालू आदि के कणों या परजीवी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह बाहरी कण दुर्घटनावश विशेष प्रजाति के सीप के अन्दर मुलायम भाग में प्रवेश कर जाते हैं और जहां से ये बाहर नहीं हो पाते हैं। सीप यह बाहरी तत्व को ढंकने के लिए एक रासायनिक तत्व को निकालते हैं। जिसे 'नैकर' कहते हैं। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है, जब तक यह बाहरी कण शरीर के भीतर रहता है। यह रासायनिक तत्व परत – दर – परत जमा होते रहते हैं और धीरे-धीरे अद्भुत रत्न का निर्माण होता है। (चित्र '१')

मोती उत्पादन करने वाली सीप :– पालन द्वारा प्राप्त होने वाले मोतियों का मुख्य स्रोत समुद्री ओयस्टर हैं। मीठे जल के स्रोतों (तालाब, नदी

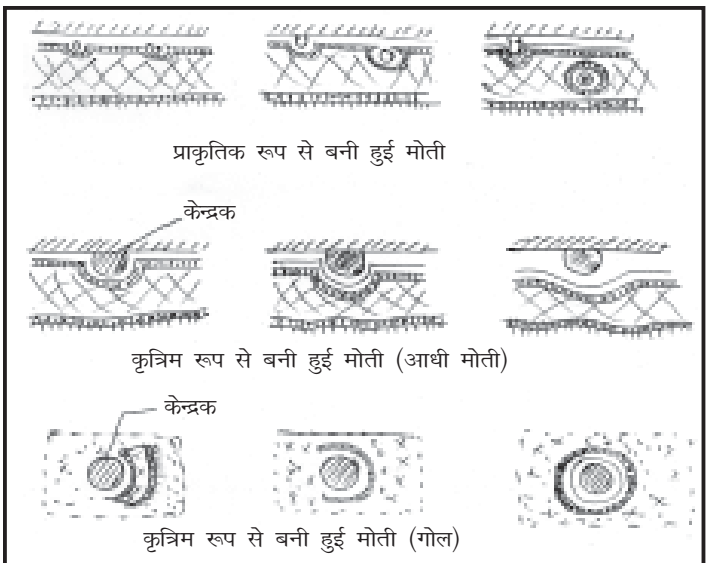

चित्र : १ – मोती तैयार होने की प्रक्रिया

आदि) में पाए जाने वाले तीन सीपों की प्रजातियां हैं। लैमनिडेन्स मारजनीलेस, लैमनिडेन्स कोरियन्स और परेशिया करुगट्टा। यह प्रजातियां पूरे भारत में सभी जगहों पर पायी जाती हैं।

मीठे जल मोती पालन

मोती उत्पादन विभिन्न चरणों में किया जाता है। जो इस प्रकार है–

- सीपों का संग्रह करना ।
- सीपों को अनुकूलित करना ।
- शल्य प्रत्यारोपण ।
- शल्य क्रिया पश्चात सीपों की देखभाल ।
- प्रत्यारोपित सीपों का तालाब में पालन (एक से दो साल तक) ।

शल्य प्रत्यारोपण विधियां :– सीफा (CIFA), भुवनेश्वर ने भिन्न – भिन्न तरह से मोती उत्पादन करने के लिए अनेक तरह की शल्य विधियां विकसित की हैं, जो हैं –

- मेप्टल गुहा प्रत्यारोपण ।
- मेप्टल ऊतक प्रत्यारोपण ।
- जनन अंगों का प्रत्यारोपण ।

पालन हेतु मोतियों का घनत्व :– २५,००० मोती / एकड़ संवर्धन का समय – १८ महीने।

मोती का आकार :– सामान्यतः गोल मोती जो कम मिलते हैं सबसे अधिक कीमती हैं। यद्यपि पालन के समय सीप में गोल केन्द्रक बहुत कम ही गोल पाया जाता है। इसके कारण असम मात्रा में केन्द्रक के ऊपर नैकर तत्व का जमा होना है। आमतौर पर पाया जाने वाला मोती गोल, अर्द्ध गोल, बटन की तरह, सिक्के की तरह, चावल के दाने की तरह और अण्डाकार होता है। छोटे मोती १ मि०मी० से लेकर २० मि०मी० तक बड़े होते हैं, लेकिन सामान्यतः ७ मि०मी० आकार के मोती विश्व बाजारों में बेचे जाते हैं। मोती का आकार जितना बड़ा होता है उसकी कीमत उतनी ही अधिक है। डिजाइन मोतियां 'ए' श्रेणी की कीमत १५० रु/मोती और 'बी' श्रेणी की ६० रु/ मोती होती है।

देश में मोती की मांग दिनों दिन तीव्र गति से बढ़ रही है। जिसके कारण सरकारी प्रयासों से मीठे जल मोती पालन को देश में एक ग्रामीण कुटीर उद्योग के रूप में स्थापित किया जा सकता है।

यीशु ने उन से कहा, चौकस रहो, और हर प्रकार के लोभ से अपने आपको बचाए रखो; क्योंकि किसी का जीवन उस की संपत्ति की बहुतायत से नहीं होता। उस ने उन से एक दृष्टान्त कहा, कि किसी धनवान की भूमि में बड़ी उपज हुई। तब वह अपने मन में विचार करने लगा, कि मैं क्या करूं, क्योंकि मेरे यहां जगह नहीं, जहां अपनी उपज इत्यादि रखूं। और उस ने कहा; मैं यह करूंगाः मैं अपनी बखारियां तोड़ कर उन से बड़ी बनाऊंगा; और वहां अपना सब अन्न और संपत्ति रखूंगा : और अपने प्राण से कहूंगा, कि प्राण, तेरे पास बहुत वर्षों के लिये बहुत संपत्ति रखी है; चैन कर; खा, पी, सुख से रह। परन्तु परमेश्वर ने उससे कहा; हे मूर्ख, इसी रात तेरा प्राण तुझ से ले लिया जायेगा : तब जो कुछ तू ने इकट्ठा किया है, वह किस का होगा ? ऐसा ही वह मनुष्य भी है, जो अपने लिए धन बटोरता है, परन्तु परमेश्वर की दृष्टि में धनी नहीं ॥

लूका १२ : १५–२१

गर्मी का फल तरबूज और खरबूजा

डा० सूर्य नारायण
वरिष्ठ प्रवक्ता
उद्यान विज्ञान विभाग
कुलभास्कर आ०पो०ग्रे० कालेज, इलाहाबाद

मो० शरीफ
शोध छात्र
उद्यान विज्ञान विभाग
कुलभास्कर आ०पो०ग्रे० कालेज, इलाहाबाद

मिट्टी व जलवायु :- तरबूज और खरबूजे की खेती के लिए हल्की दोमट जीवांश युक्त मिट्टी अच्छी होती है। वैसे सभी प्रकार की मिट्टी में भी ये फसलें ली जा सकती हैं। ऊंचा तापक्रम और शुष्क वातावरण तरबूज और खरबूजे के लिए उपयुक्त होता है।

प्रजातियां :- तरबूज की प्रजातियों में शुगरबेबी, यसाईपमातो, दुर्गापुर केसर और दुर्गापुर मीठा मुख्य प्रजातियां हैं।

खरबूजे की प्रजातियों में हरा मधु, पूसा, मधुरस, पंजाब सुनहरी, दुर्गापुर मधु, अर्काजीत, अर्काराजहंस और लखनऊ सफेदा मुख्य प्रजातियां हैं।

बीज की मात्रा :- प्रति हेक्टेयर तरबूज के लिए ४.५ से ५ किग्रा० और खरबूजे के लिए २.५ से ३ किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है।

खेत की तैयारी और बुवाई और खाद :- खेत की २-३ जुताई करके समतल कर लेना चाहिए। इसी बीच १५० से २०० कुन्टल प्रति हेक्टेयर गोबर की सड़ी खाद भूमि में मिला देनी चाहिए। इन फसलों में प्रति हेक्टेयर ५० किलोग्राम नाइट्रोजन ६० किलोग्राम पोटाश और ६० किलोग्राम फास्फोरस की भी आवश्यकता होती है। अतः नाइट्रोजन की आधी तथा फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा को भी भूमि की तैयारी के समय मिला देना चाहिए और शेष नाइट्रोजन को दो बार में खड़ी फसल में भुरकाना चाहिए। पहला भुरकाव बुवाई के २५-३० दिन पर और दूसरा लगभग ४५ दिन पर फूल लगते समय करना चाहिए।

बुवाई फरवरी से लेकर मार्च के मध्य तक करना चाहिए। खेत की तैयारी के बाद ३-४ मीटर की दूरी पर ३० सेमी० चौड़ी नालियां बनानी चाहिए। इन नालियों के दोनों ओर किनारों पर ५०-६० सेमी० की दूरी पर ३-४ सेमी० गहराई में बुवाई करनी चाहिए। कम से कम एक स्थान पर ३-४ बीज अवश्य ही डालना चाहिए। बुवाई के स्थान पर लगभग आधा कि०ग्रा० गोबर की सड़ी खाद मिला देने से बीज का जमाव भी आसानी से होता है और पौधे की बढ़वार भी अच्छी चलती है। बुवाई करते समय भूमि में पर्याप्त नमी का रहना आवश्यक है। यदि नमी की कमी हो तो बुवाई के बाद हल्की सिंचाई कर सकते हैं। जमाव के बाद जब ४-५ पत्तियां पौधों में निकल जाये तब एक स्थान पर एक या दो स्वस्थ पौधे छोड़कर शेष को निकाल देना चाहिए।

सिंचाई, निराई, गुड़ाई :- तरबूज व खरबूजे के पौधों में ७-८ दिन पर सिंचाई करते रहना चाहिए और समय-समय पर निराई गुड़ाई भी करनी चाहिए। बलों को भूमि पर फैलने देना चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि उनका फैलाव हवा के बेग की दिशा में हो, जिससे कोई क्षति न पहुंचे।

फलों की तुड़ाई और उपज :- तरबूज और खरबूजे के फल बुवाई से १०० से ११० दिन के भीतर तोड़ने लायक हो जाते हैं। तरबूज के फल तोड़ते समय उसमें ५ सेमी० लम्बी डंठल छोड़ देनी चाहिए। फल पककर तोड़ने को तैयार हो गये हैं या नहीं, यह कई चिन्हों से पहचाना जा सकता है। हाथ से ठोंकने पर फल में से धमधम की आवाज आती है। तरबूजा के फल का जो भाग जमीन पर रहता है वह पीला हो जाता है।

खरबूजे से फलों में पकने पर कुछ पीलापन आने लगता है और छिलके मुलायम हो जाते हैं। डंठल के नीचे फल का भाग मोमिया हो जाता है। पकने पर खरबूजे के फल में विशेष गंध भी उत्पन्न होने लगती है। प्रति हेक्टेयर तरबूज की २००-२५० कुन्टल तथा खरबूजे की १००-१५० कुन्टल उपज होती है।

University Publication Division

Allahabad Agricultural Institute-Deemed University
Allahabad-211007

Phone- 0532-2684278

HAMAR GAON

Membership Form

1. Name :.....
2. Designation :.....
3. Department affiliation :.....
4. Address : Office.....

   .....

   Residence.....

   .....
5. Phone No. : Office.....Residence.....

   Mobile.....
6. D.D./Cheque No.....Dated.....Banker.....
   (Crossed)

   .....

Amount : Rupees One Hundred only (Rs. 100/-) for the year.....
(Tick the appropriate ref. rule no. 8)
Rupees Two Hundred only (Rs. 200/-) for the year.....

Payable to **AAI-DU Publication A/**c.

Signature

Dated.....

Name.....

cut from here

cut from here

cut from here

RULES AND REGULATION

1. Article for publication in Hamar Gaon, should be in simple Hindi language only.
2. Hamar Gaon is quarterly publication.
3. It should be either neatly hand written only on one side of the paper or typed in double spaced.
4. Articles should be of the interest of farmers, and the rural setup, which includes topics on Agriculture Science and Home Science origin etc.
5. Article should be preferably short, not more than four pages of the size of 7.25 x 9.50.
6. Articles for Hamar Gaon will find a place, only from members of Hamar Gaon.
7. Membership form is available in office of University Publication Division.
8. Annual Individual Membership is available for Rupees One Hundred (Rs. 100/-) only while *Institutional membership (Departments) is for Rupees Two Hundred (Rs. 200/-) only. (Postal Charges extra)
9. Membership for Hamar Gaon begin every January and ends in December.
10. Articles from students should be forwarded by Head of the Department only.
11. The authenticity of the articles is the sole responsibility of the authors and not of University Publication Division.

* Applicable to educational institutions i.e. organisations/university/colleges/schools.

विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग

इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट - मान्य विश्वविद्यालय
इलाहाबाद - २११००७

Phone- 0532-2684278

हमार गाँव
सदस्यताफार्म

1. नाम :- .....

2. पद :- .....

3. विभाग :- .....

4. पता :- कार्यालय.....

.....

निवास.....

5. दूरभाष :- लैण्डलाइन- कार्यालय.....निवास.....

मोबाइल.....

6. वार्षिक सदस्यता शुल्क का भुगतान :- डिमाण्ड ड्राफ्ट/चेक नं0.....दिनांक.....

बैंक .....

धनराशि :- रुपये एक सौ मात्र (रु0 100/-)

(उचित स्थान पर सही का चिन्ह लगायें। नियम-8 देखें)

रुपये दो सौ मात्र (रु0 200/-)

''ए0ए0आई0-डी0यू0 पब्लिकेशन एकाउन्ट'' के पक्ष में देय।

हस्ताक्षर

7. वार्षिक सदस्यता अवधि वर्ष.....के लिए ।

दिनांक.....

नाम.....

यहां से काटिये — यहां से काटिये

नियम एवं शर्तें

लेखक ध्यान दें -

1. हमार गाँव त्रैमासिक पत्रिका के लिए लेख केवल सरल हिन्दी भाषा में ही स्वीकार्य किये जायेंगे।
2. लेख पेपर में केवल एक तरफ डबल स्पेस में टाइप अथवा स्पष्ट हस्तलिखित ही मान्य होंगे।
3. लेख कृषकों, उनके परिवारों के हित में कृषि विज्ञान एवं गृह विज्ञान पर आधारित होने चाहिए।
4. लेख चार पेज (साईज 7.25 X 9.50) से अधिक न हो।
5. हमार गाँव के सदस्यों के ही लेख पत्रिका में प्रकाशित किये जाते हैं।
6. सदस्यता फार्म विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग में उपलब्ध हैं।
7. वार्षिक सदस्यता हेतु शुल्क रुपये एक सौ (रु0 100/-) मात्र एवं *संस्थान के लिए सदस्यता शुल्क रुपये दो सौ (रु0 200/-) मात्र निर्धारित है। (डाकखर्च अतिरिक्त)।
8. हमार गाँव की सदस्यता अवधि प्रत्येक वर्ष जनवरी से दिसम्बर अन्त तक होगी।
9. विद्यार्थियों द्वारा प्रेषित लेख उनके सम्बन्धित विभाग के विभागाध्यक्ष से अग्रसारित होना आवश्यक है।
10. लेख की सम्पूर्ण जिम्मेदारी लेखक की होगी। लेख के लिए विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग, ए0ए0आई0-डी0यू0 किसी प्रकार उत्तरदायी नहीं होगा।

** शैक्षणिक संस्थानों जैसे संगठन/विश्वविद्यालय/महाविद्यालयों/स्कूलों पर लागू।*

यहां से काटिये